वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

वेद-प्रकाश

इस धनुष से कैसे बाण छोड़ेगा ?

को अद्य युङ्क्ते धुरि गा ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हृणायून्।
आसन्निषून् हृत्स्वसो मयोभून्य एषां भृत्यामृणधत्स जीवात्।।

अथर्व० १८।१।६

अर्थ—(ऋतस्य) सत्य का (गाः) गान करने वाले (शिमीवतः) कर्मों का उपदेश करने वाले (भामिनः) प्रकाश फैलाने वाले (दुर्हृणायून्) दुष्ट-व्यवहारों पर क्रोध करने वाले (मयोभून्) सुख फैलाने वाले (हृत्स्वसः) दूसरों के हृदयों में जाकर लगने वाले (इषून्) बाणों को (अद्य) आज (धुरि) कर्त्तव्य-भार उठाने के समय (आसन्) मुख-रूप धनुष पर (कः) कौन (युङ्क्ते) चढ़ाता है ? (यः) जो (एषां) इन बाणों की (भृत्याम्) भरण-विधि को (ऋणधत्) वृद्धि देता है (सः) वही (जीवात्) जीवन प्राप्त करता है।

हमारा मुख एक प्रकार का धनुष है जिससे वचन-बाण निकला करते हैं। साधारण तौर पर इन वचन-बाणों से असत्य की गूंज निकला करती है। इनके कारण संसार में दुःख बढ़ता है।

वेद का आदेश है कि मनुष्य ! सांसारिक कर्त्तव्य-भार उठाने के समय तुझे अपने मुख-धनुष से वचन-बाण चलाने पड़ेंगे, तू उन्हें शौक से चलाना। पर ध्यान रखना कि वे वचन-बाण सत्य का गान करने वाले हों—वे अन्धकार का नाश करने वाले हों—वे अन्याय, अधर्म और दुष्ट व्यवहार से समझौता न करें प्रत्युत उसकी जड़ काटनेवाले हों। उनकी वजह से संसार में सुख की धाराएँ बह निकलें।

मनुष्य ! यदि तू ऐसे बाण चलाना सीख गया तो संसार में वास्तविक जीवन आएगा।

—'वेदोद्यान के चुने हुए फूल' से

बोध-कथा

सवाल एक बादशाह के : जवाब एक बालक के

बादशाह अकबर अपने समय के एक सफल प्रशासक थे। वह अपनी जनता के सुख-दुःख का सदा ख्याल रखते थे। उनके राजदरबार में अपने समय के नौ श्रेष्ठ गुणी कलावन्त हर तरह की उलझन-समस्या-सवाल का जवाब देने के लिए तैयार रहते थे। एक दिन बादशाह अकबर ने अपनी एक निजी उलझन के बारे में कहा, "इस उलझन से मैं बहुत परेशान हो उठा हूं। मेरे दो सवाल हैं, उम्मीद है आप उनके दो जवाब देंगे। मेरा पहला सवाल यह है कि सभी मजहबों की किताबों में लिखा है—खुदा या परमात्मा ने यह दुनिया बनाई है, वही उसे चलाता है। मेरा पहला सवाल उसी खुदा के बारे में है। वह खुदा दीखता क्यों नही है ? मेरा दूसरा सवाल यह है कि यह खुदा भले-बुरे का फैसला कैसे करता है ? बादशाह ने इन दोनों सवालों का तुरन्त जवाब देने के लिए कहा। सब की नजर बीरबल पर पड़ीं। बादशाह ने बीरबल से कहा—वह इस गुत्थी को सुलझाए। हाजिर जवाब बीरबल ने भी सवालों का जवाब देने के लिए कुछ समय की मोहलत चाही।

इन सवालों के चक्कर में बीरबल घर पर बेचैन बैठे थे कि उनके छोटे बेटे ने कहा—"पिता जी, आपको क्या चिन्ता है, जो इतने परेशान हैं। बीरबल ने बादशाह के दोनों सवाल दोहरा दिए फिर कहा, "बादशाह को इन सवालों का जवाब देना होगा।" उनके बेटे ने कहा—"पिता जी, आप इसकी चिन्ता क्यों करते हैं। इन सवालों का तो मैं ही जवाब दे दूंगा।"

अगले दिन राजा बीरबल के साथ उनका पुत्र भी बादशाह के दरबार में गया और वहां जाकर अपने पिता के साथ खड़ा हो गया। बादशाह ने बालक का परिचय पूछा तो बीरबल ने कहा—"यह मेरा बेटा है, यह आपके सवालों का जवाब दे देगा।"

बादशाह ने कहा—"यह लड़का कुछ बेवकूफ-सा लगता है। वह क्या जवाब देगा।" बालक ने कहा—"मूर्ख मैं नहीं, गुस्ताखी माफ हो तो कहूंगा आप हैं।" बादशाह ने झिड़कते हुए कहा—"बादशाह की शान में तुम्हारे बोल ठीक नहीं हैं।"

बालक ने कहा—"फैसला आप और दरबार करे। मैं आपके भरोसे के मन्त्री का बेटा हूं। पहली बार आपके दरबार में आया हूं। क्या अपने मेहमान का ऐसे ही सत्कार करते हैं ?"

(शेष पृष्ठ १७ पर)

// वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ४४, अंक १२ वार्षिक मूल्य : बीस रुपये जुलाई १९९५

सम्पा॰ अजयकुमार आ॰ सम्पादक : स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

सामान्य जिज्ञासु के लिए उपनिषदों की देन–७

ब्रह्माण्ड तथा पिण्ड की उत्पत्ति और विकास की कहानी : ऐतरेय उपनिषद् की जबानी

–नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

ऐतरेय उपनिषद् में एक कथानक है जब ब्रह्माण्ड और पिण्ड के देवता प्रादुर्भूत हो गए। ब्रह्माण्ड में–पृथिवी, अप्, तेज, वायु, आकाश प्रादुर्भूत हो गए। पिण्ड में–मुख, आंख, कान, नाक, त्वचा आदि पैदा हो गए। उनके सामने समस्या पैदा हुई कि बिना सहारे के हम कहां उड़ते फिरें, कहां अपना बसेरा या ठिकाना बनाएं। इसी के साथ उनके सामने यह उलझन भी थी कि जब तक पृथिवी आदि भोग्य पदार्थों का कोई भोक्ता नहीं, जब तक मुख, आंख, नाक आदि भोगने वाली शक्तियां का कोई भोग्य नहीं, तब तक वे पैदा होकर भी क्या करें ? ये दिव्य शक्तियां तो पैदा हो गईं, उन सब को अनुभूति हुई कि मानो वे किसी बड़े समुद्र में आ गई हों, उनका कोई ठिकाना नहीं था, उनके सामने उलझन थी–वे कहां रहें, वे अपना समय-दिन-रात कहां बिताएं ? जब ये मारे-मारे बेचैन घूम रही थीं तब सृष्टि-रचयिता ने उनके साथ भूख और प्यास को जोड़ दिया। तब वे दिव्य शक्तियां पहले से अधिक बेचैन हो गईं। उन्होंने अपने रचयिता भगवान् से प्रार्थना की–हमें कोई आश्रय-स्थान ठिकाना दीजिए, जहां हम अपना निवास बना कर अन्न खाकर अपनी भूख मिटा सकें।

ताः एताः देवताः सृष्टाः अस्मिन् महति अर्णवे प्रापतन् तं अशनायापिपासाभ्यां अन्ववार्जत् ता एनम् अब्रुवन् आयतनं नः प्रजानीहि यस्मिन् प्रतिष्ठिता अन्नम् अदाम इति ॥१।२।१॥

इस पर भगवान् ने उन दिव्य शक्तियों के सम्मुख गाय लाकर खड़ी कर दी-पांचों महाभूतों तथा इन्द्रियों रूपी देवताओं ने निवेदन किया-''यह आश्रय स्थल उनके लिए पर्याप्त नहीं है, फिर उनके सामने घोड़ा खड़ा कर दिया । इन दिव्य शक्तियों ने कहा-''यह आश्रय भी हमारे लिए पर्याप्त नहीं ।'' उस स्थिति में भगवान् ने उनके सामने पुरुष को लाकर खड़ा कर दिया और इन्द्रियों से कहा इसमें अपना आश्रय-स्थल बना लो ।'' इन्द्रियों ने कहा-''यह तो बहुत अच्छा बनाया हुआ है, यह रचना बहुत अच्छी है ।'' इन्द्रियों ने एक दूसरे से कहा-''सब अपने-अपने आयतन के अनुसार इसमें प्रविष्ट हो जाओ।''

ताभ्यः पुरुषम् आनयत् । ता अब्रुवन् सुकृतं वत इति पुरुषः वाव सुकृतम् । ता अब्रवीत् यथा आयतनम् प्रविशत इति ॥१।२।३॥

पुरुष में देवताओं तथा इन्द्रियों ने किस प्रकार आश्रय-स्थल बनाया, इसका वर्णन करते हुए उपनिषत्कार बतलाते हैं-ब्रह्माण्ड पुरुष के मुख से वाणी और वाणी से अग्नि का प्रादुर्भाव हुआ । अगली ऋचा में कहा गया है- ब्रह्माण्ड पुरुष के मुख की अग्नि पिण्ड-पुरुष के मुख में वाणी होकर प्रविष्ट हो गई । ब्रह्माण्ड-पुरुष की वायु प्राण बन कर पिण्ड पुरुष की नासिकाओं में प्रविष्ट हो गई । ब्रह्माण्ड पुरुष का रचा हुआ आदित्य पिण्ड-पुरुष की आंखों में प्रविष्ट हुआ । ब्रह्माण्ड पुरुष की दिशाएं श्रोत्र बन कर पिण्ड पुरुष के श्रोत्रों में प्रविष्ट हो गईं। ब्रह्माण्ड-पुरुष के लोम पिण्ड-जगत् में औषधियों और वनस्पतियों में प्रविष्ट हो गए । ब्रह्माण्ड-पुरुष का चन्द्रमा पिण्ड-पुरुष का मन बना और मन बन कर हृदय में प्रविष्ट हो गया । मृत्यु अपान बन गई, अपान बन कर पिण्ड-पुरुष की नाभि में प्रविष्ट हो गई। विराट्-पुरुष का जल पिण्ड-पुरुष के शिश्न में वीर्य बनकर प्रविष्ट हो गया । इस छोटे से कथानक द्वारा बतलाया गया है जो पिण्ड में है, वही ब्रह्माण्ड में है । सृष्टि का विकास कैसे हुआ ? सृष्टि का विकास अव्यक्त-अनघड़ प्रकृति से हुआ यह बात वर्तमान सृष्टि-विज्ञान कहता है, यही मान्यता उपनिषत्कार भी मानते हैं । उपनिषत् की ऋचा देखिए:

अग्निः वाक् भूत्वा मुखं प्राविशत्, वायुः प्राणः भूत्वा नासिके प्राविशत् । आदित्यः चक्षुः भूत्वा अक्षिणी प्राविशत् दिशः श्रोत्रं भूत्वा कर्णौ प्राविशत् । औषधिः वनस्पतयः लोमानि भूत्वा त्वचं प्राविशन् चन्द्रमा मनः भूत्वा हृदयं प्राविशत् । मृत्युः अपानः भूत्वा नाभिं प्राविशत् आपः रेतः भूत्वा शिश्नं प्राविशन् ॥१।२।४॥

जब सब देवताओं और इन्द्रियों को पुरुष में ठिकाना मिल गया तब भूख और प्यास भी भगवान् के पास गए और अनुरोध करने लगे- ''आप हम दोनों का तो ख्याल रखेंगे ।'' तब जगन्नियन्ता भगवान् ने

कहा–"ब्रह्माण्ड और पिण्ड की इन दिव्य शक्तियों के साथ तुम दोनों को भी इनको सेवा के लिए नियुक्त कर देता हूं । इन देवताओं के साथ तुम्हें भी उनके आनन्द का सहभागी बनाता हूं, । यही कारण है कि जिन-जिन दिव्य शक्तियों को हवि दी जाती है, उन में ये दोनों भी सहभागी होते हैं । ये दोनों कौन हैं **अशनाया पिपासे** भूख-प्यास । जब तक भूख-प्यास न हों, सृष्टि एक चरण आगे नहीं बढ़ सकती । सृष्टि का सारा विकास भूख और प्यास के शमन के लिए ही है । सृष्टि-उत्पत्ति के इस प्रसंग में ब्रह्माण्ड तथा पिण्ड के लिए अंग-प्रत्यंग में भूख-प्यास को जोड़ दिया गया है ।

सृष्टि का निर्माता कौन ?

ब्रह्माण्ड-पिण्ड की इस विशाल सृष्टि में पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश आदि तत्त्वों को देख कर प्रत्येक जिज्ञासु के मन में कुतूहल होता है–इनका निर्माता कौन है ? पृथ्वी के ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों, छोटी-बड़ी खाइयों, हजारों-सैकड़ों मीलों लम्बी जल-धाराओं, सूर्य, चन्द्र, तारे सरीखे नक्षत्रों, कोटि-कोटि भार के अनन्त नक्षत्रों के आधारशून्य भ्रमण को देख कर यह जिज्ञासा स्वभावतः उठती है कि यह सब सृष्टि-जगत् का चक्र कैसे चल रहा है ? क्या ये महाभूत अपने आप सृष्टि को चला रहे हैं या उन्हें संचालित करने वाला, जड़ जगत् को चलाने वाला कौन है ? इस जिज्ञासा का उत्तर ऐतरेय उपनिषद् में दिया गया है–सृष्टि उत्पत्ति से पूर्व एक परमात्मा ही था, दूसरा कोई पदार्थ गति तक नहीं करता था । परमात्मा ने देखा और आकांक्षा की, इस नाना रूप सृष्टि का सृजन करूँ । सम्बन्धित ऋचा देखिए–

आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत् । नान्यत्किञ्चन मिषत् । स ईक्षत लोकान्नु सृजा इति ॥

ऐतरेय उपनिषद् १ अध्याय (प्रथम खण्ड)।।१।।

उपनिषत्कार वर्णन करते हैं–सृष्टि का सृजन करने के बाद परमात्मा ने इन लोकों का सृजन किया । किन लोकों का ? द्युलोक से ऊपर जहां तक भी लोक है, वहां से द्युलोक तक का सारा क्षेत्र 'अम्भस-लोक' है । सूर्य, चन्द्र, तारे, नक्षत्र आदि प्रकाश देने वाले तारामण्डल का सारा क्षेत्र 'मरीची-लोक' है, उत्पन्न होने वाले और मरने वाले प्राणियों का लोक 'मर-लोक' है, इन लोकों में पृथ्वी के नीचे जितना भी लोक है वह आपः पाताल-लोक है । उपनिषत्कार की दृष्टि में पृथिवी के ऊपर और नीचे जल ही है । सम्बन्धित मन्त्र यह है–

सइमान्लोकान्असृजत।अम्भः मरीचीर्मरमापोऽदोम्भः परेण दिवंद्यौः प्रतिष्ठाऽन्तरिक्षंमरीचयः। पृथिवीमरोयाअधस्तात्ताआपः।।२।।

जगन्नियन्ता परमात्मा ने देखा कि पृथिवी, द्यु, अन्तरिक्ष इन लोकों का तो निर्माण हो गया, परन्तु यह समस्या अवशिष्ट रह गई कि इन लोकों की परिपालना कैसे होगी ? ये लोक व्यवहार में कैसे आएंगे? इनका उपभोग कैसे होगा और कौन करेगा, इस पर विचार कर उसने सोचा कि लोकपालों की सृष्टि करनी चाहिए। लोकों के पालन के लिए जलों में से अनघड़ विराट् पुरुष का सृजन किया। सृष्टि की रचना करते हुए परमात्मा ने सर्वप्रथम ऐसे विराट्-पुरुष का निर्माण किया, जिसमें ब्रह्माण्ड तथा पिण्ड–दोनों के मौलिक तत्त्व विद्यमान थे। सृष्टि का चक्र निरन्तर चले, इसके लिए परमात्मा ने तपस्या की। ऐतरेय उपनिषत् के रचयिता ऋषि बतलाते हैं–उस अनघड़ अव्यक्त पुरुषाकार पिण्ड को तपाया गया–वह पुरुषाकार तो था, परन्तु उस ब्रह्माण्ड-पुरुष के मुख, नाक, आंख, कान आदि अंग खुले न थे–पिण्ड को तपाने से वह ऐसे खुल गया, जैसे गर्मी देने से अण्डा खुल जाता है और अन्दर से मुख, नाक, आंख वाला प्राण-धारी जीव प्रादुर्भूत हो जाता है। इस ब्रह्माण्ड-पुरुष के मुख से वाणी गूंजी, ब्रह्माण्ड-पुरुष की वाणी से अग्नि प्रकट हुई। ब्रह्माण्ड-पुरुष की नासिकाएं खुल गई और इन खुली नासिकाओं से ब्रह्माण्ड-पुरुष के प्राणों का सृजन हुआ, उस के प्राण-प्राणवायु से ओत-प्रोत हो गए, ब्रह्माण्ड-पुरुष की आंखें खुल गई, उसकी आंखों से ब्रह्माण्ड के आदित्य का सृजन हुआ, इन खुले हुए कानों से-पुरुष के कानों का निर्माण हुआ और उसके कानों से ब्रह्माण्ड की दिशाओं का सृजन हुआ, ब्रह्माण्ड पुरुष की त्वचा से उसके लोमों का और उसके लोमों से औषधियों और वनस्पतियों का सृजन हुआ, फलतः ब्रह्माण्ड पुरुष के हृदय का और उसके हृदय से उसके मन का सृजन हुआ। ब्रह्माण्ड पुरुष के मन से चन्द्रमा का सृजन हुआ, फिर ब्रह्माण्ड पुरुष की नाभि खुली और नाभि से अपान खुला। अपान की प्रक्रिया शुरू होने से मृत्यु-चक्र का प्रारम्भ हुआ। अपान से ब्रह्माण्ड पुरुष के शिश्न का छिद्र खुला, उसके खुलने से पुरुष के ओज-वीर्य का सृजन हुआ और उसके सृजन से जलों का सृजन हुआ। वस्तुतः सृष्टि-विकास की प्रक्रिया को शब्दशः समझने की जगह यह उसके विकास की एक दिशा की ओर इंगित करता है। ऐतरेय की मूल ऋचा इस प्रकार है–

तमभ्यपतत्तस्याऽभितप्तस्य मुखं निरभिद्यत यथाण्डम्। मुखाद्वाग्वाचोऽग्निर्नासिके निरभिद्येतां नासिकाभ्यां प्राणः प्राणाद्वायुरक्षिणी निरभिद्येतामक्षिभ्यां चक्षुश्चक्षुष आदित्यः, कर्णौ निरभिद्येतां कर्णाभ्यां श्रोत्रं श्रोत्राद्दिशस्त्वङ् निरभिद्यत त्वचो लोमानि लोमभ्य ओषधिवनस्पतयो हृदयं निरभिद्यत हृदयान्मनो मनसश्चन्द्रमा नाभिर्निरभिद्यत नाभ्या अपानो अपानान्मृत्युः शिश्नं निरभिद्यत शिश्नाद्रेतो रेतसः आपः ॥१।१।४॥

ऐतरेय उपनिषत् के ऋषि ने सृष्टि उत्पत्ति का विषय प्रस्तुत करते हुए बतलाया कि जब भगवान् ने पृथिवी, अप्, तेज आदि लोकों और मुख, नाक, आंख, कान आदि लोकपालों—इन्द्रियों आदि की सृष्टि बना दी, उनके साथ भूख-प्यास को भी जोड़ दिया, उस समय उन्हें अनुभूति हुई कि उनके साथ उनके भरण पोषण के लिए अन्न-जल, दाने-पानी की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए । इस के पहले अध्याय के तीसरे खण्ड का पहला मन्त्र देखिए—

स ईक्षतेमे नु लोकाश्च लोकपालाश्च ।
अन्नमेभ्यः सृजै इति ।।१।।

भगवान् ने अन्न की सृष्टि के लिए जलों को तपाया, जब जल तपने लगे, उनसे वाष्प-भाप बनी, वाष्प से बादल बने, बादलों से वर्षा हुई और वर्षा से अन्न । फलतः साक्षात् मूर्तिमन्त होकर पौधे-वनस्पतियां उठ खड़ी हुईं—ये पौधे वनस्पतियां ही अन्न के प्रतीक स्वरूप थे । सम्बद्ध मन्त्र इस प्रकार है—

स आपः अभ्यतपत् । ताभ्योऽभितप्ताभ्यो मूर्तिरजायत ।
यौ वै सा मूर्त्तिरजायतान्नं वै तत् ।।२।।

यद्यपि भगवान् ने अन्न-वनस्पति उत्पन्न किए तथापि अन्न देवताओं की विपरीत दिशा की ओर चला गया, फलतः दिव्य शक्तियों को अन्न हस्तगत नहीं हुआ । दिव्य शक्तियों ने वाणी से अन्न ग्रहण करने की चेष्टा की, परन्तु केवल बातें बनाने से अनाज नहीं मिल सकता, अपनी ओर अनाज का आह्वान करने से वह अन्न नहीं मिल सकता । **(तत् वाचा अजिघृक्षत् । तत् न अशक्नोत् वाचा ग्रहीतुम्)** वाणी के बाद प्राण ने अन्न पकड़ने का प्रयत्न किया, परन्तु यह प्राण के भी हाथ न आया **(तत् प्राणेन अजिघृक्षत् । तत् न अशक्नोत् प्राणेन ग्रहीतुम्)** दिव्य शक्तियां श्वास-प्रश्वास से खींच कर अन्न नहीं ग्रहण कर सकीं । वाणी तथा प्राण के बाद आंख ने उसे पकड़ने का प्रयत्न किया, परन्तु वह आंख के भी नियन्त्रण में नहीं आया । **(तत् चक्षुषा अजिघृक्षत् । तत् न अशक्नोत् चक्षुषा ग्रहीतुम् ।)** वाणी, प्राण, आंख के बाद श्रोत्र ने भी अन्न को पकड़ने की कोशिश की, परन्तु वह श्रोत्र के भी हाथ न आया **(तत् श्रोत्रेण अजिघृक्षत् तत् न अशक्नोत् श्रोत्रेण ग्रहीतुम् ।)**

दिव्य शक्तियों ने वाणी, प्राण, आंखों, श्रोत्र से अन्न को पकड़ने का प्रयत्न किया, परन्तु सफलता नहीं मिली, फिर त्वचा ने अन्न को पकड़ना चाहा, परन्तु वह त्वचा के भी हाथ न आया । **(तत् त्वचा अजिघृक्षत् । तत् न अशक्नोत् त्वचा ग्रहीतुम् । स यद् ह एनत् त्वचा अग्रहैष्यत् ।)** जब दिव्य शक्तियों ने वाणी, प्राण, आंख, श्रोत्र और त्वचा

के माध्यम से पकड़ना चाहा और सफलता नहीं मिली, तब मन ने उसे पकड़ने का प्रयत्न किया, पर चाहने मात्र से यह सम्भव नहीं हुआ । **(तत् मनसा अजिघृक्षत् । तत् न अशक्नोत् मनसा ग्रहीतुम् ।)** जब पुरुष का कोई भी अंग अन्न को पकड़ नहीं सका, न वाणी द्वारा अन्न की पुकार से, न श्वास-प्रश्वास की क्रिया से, न देखने मात्र से, न कानों द्वारा सुनने से, न त्वचा द्वारा छू लेने से, न मन द्वारा इच्छा करने मात्र से अन्न की प्राप्ति सम्भव हुई, तब अपान वायु ने अन्न को पकड़ने की इच्छा की, तब वह उसकी पकड़ में आ गया । अपान वायु अन्न को पकड़ने वाला है, यह अपान वायु ही है जो अन्न के माध्यम से आयु देता है । उपनिषद् की दृष्टि में अपान-वायु अन्नायु है । मूल ऋचा देखिए-

तदपानेनाजिघृक्षत्तदावयत् । स एषोऽन्नस्य ग्रहः । यद्वायु-रन्नायुर्वा एष यद्वायुः ॥ पहला अध्याय, तृतीय खण्ड ॥१०॥

नाभि के नीचे जो वायु गति करती है, वह अपान-वायु है । अनाज पच जाने पर अपान वायु ही उसे गति देकर नीचे ले जाता है। यह अपान जब बिगड़ जाता है, तब प्रायः रोगी पेट की हवा की शिकायत करते हैं, कि पेट से वायु नहीं निकलती, वायु अटक जाती है और व्यक्ति पेट दर्द की शिकायत करता है । इस प्रकार हम ने देखा कि ब्रह्माण्ड के पांच महाभूतों और पांचों इन्द्रियों की भूख-प्यास का शमन करने में अन्न की विशेष महत्ता है, परन्तु यह पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने के बाद उपनिषत्कार जिज्ञासु को अध्यात्म के चरम लक्ष्य की ओर प्रेरणा देते हैं, फलतः जीवात्मा ने विचार किया कि यह पुरुष रूपी पिण्ड मेरे बिना वाणी से स्वयं बोलने लगे, मेरे बिना प्राण वायु से स्वतः सांस लेने लगे, मेरे बिना चक्षु-आंखें स्वतः देखने लगें, यदि मेरे बिना कान से स्वतः सुनने लगें, मेरे बिना त्वचा से स्वतः छूने लगें, मेरे बिना मन स्वतः चिन्तन करने लगे और अपान से खाना आदि और बाह्य द्वारों से मल-मूत्र आदि का त्याग होने लगे तब फिर मुझ जीवात्मा के अस्तित्व की क्या महत्ता है, अगर मेरे बिना सब इन्द्रियों का काम चले तो देखा जाए, जीवात्मा ने इन्द्रियों को ललकारा और कहा-मेरे बिना तुम्हारा काम नहीं चल सकता । फलतः देवता और इन्द्रियां समझ गई कि जीवात्मा के बिना यह पुरुष पिण्ड मिट्टी का निर्जीव पिण्ड ही बना रह जाएगा । मूल ऋचा देखिए-

स ईक्षत कथं न्विदं मदृते स्यादिति स ईक्षत कतरेण प्रपद्या इति। स ईक्षत यदि वाचाऽभिव्याहृतं यदि प्राणेनाभिप्राणितं, यदि चक्षुषा दृष्टं यदि श्रोत्रेण श्रुतं यदि त्वचा स्पृष्टं यदि मनसा ध्यातं यद्यपानेनाभ्यपानितं यदि शिश्नेव विसृष्टमथ कोऽहमिति ॥११॥

इन्द्रियों की दीन अवस्था देखकर जीवात्मा पुरुष-पिण्ड में प्रविष्ट हो गया। ठीक वैसे ही जैसे ब्रह्माण्ड के विराट् आयतन में अग्नि, वायु, अदित्य आदि प्रविष्ट हुए थे, यह चिन्तन कर कि जीवात्मा के बिना पुरुष-पिण्ड व्यर्थ है, जीवात्मा ने शरीर की सीमा लांघ कर कपाल का भेद कर शरीर के अन्दर प्रवेश किया। जीवात्मा शरीर के इस विदृति-मूर्धा स्थान पर पहुंचता है, तब वह परमानन्द की स्थिति में पहुंचता है, शरीर में जीवात्मा-जागरण, स्वप्न सुषुप्ति की तीन निम्न स्वप्न अवस्थाओं में विचरण करता है। मन्त्र इस प्रकार है-

स एतमेव सीमानं विदार्यैतया द्वारा प्रापद्यत। सैषा विदृतिर्नाम द्वाः। तदेतन्नान्दनं तस्य त्रय आवसथास्त्रयः स्वप्नाः, अयम् आवसथः। अयम् आवसथोऽयमावसथः इति ॥१२॥

जब जीवात्मा शरीर में प्रविष्ट हुआ, तब उसने शरीर में पृथिवी, अप्, तेज, वायु आदि भूतों को देखा और जिज्ञासा प्रकट की कि उसके अतिरिक्त शरीर में क्या कोई दूसरा भी बोल रहा है। पुरुष शरीर के अंग-अंग में फैले हुए उस तत्त्व को देख कर जीवात्मा को अनुभूति हुई-उसने देखा ब्रह्म को देख लिया। मूल मन्त्र इस प्रकार है-

स जातो भूतान्यभिव्यैक्षत् किमिहान्यं वावदिषदिति। स एतमेव पुरुषं ब्रह्म ततममपश्यदिदमदर्शमहो ॥१३॥

योगियों की गुप्त भाषा में ब्रह्म-प्रत्यक्ष को इदन्द्रं-परमात्मा का साक्षात्कार हो गया, प्रत्यक्ष बात कहने की अपेक्षा रहस्यपूर्ण भाषा में परोक्ष इन्द्र नाम से ब्रह्म साक्षात्कार की स्थिति प्रस्तुत की गई। उपनिषत्कार ने सृष्टि उत्पत्ति का यह अलंकार भरा वर्णन किया है। तीसरे खण्ड का अन्तिम मन्त्र इस प्रकार है-

तस्मादिदन्द्रो नामेदन्द्रो ह वै नाम तमिदन्द्रं सन्तमिन्द्रमित्याचक्षते परोक्षेण। परोक्षप्रिया इव हि देवाः, परोक्षप्रिया इव हि देवाः ॥१४॥

पुरुष की उत्पत्ति

उपनिषत्कार की दृष्टि में यद्यपि नारी में गर्भ का धारण होता है, परन्तु असल में पुरुष के अंग-अंग में तेज-ओज एकत्र होकर वीर्य स्वरूप धारण करता है। फलतः जब पुरुष वह वीर्य नारी में सिंचन करता है, तब सन्तति जन्म लेती है, मौलिक दृष्टि से स्त्री में गर्भाधान के माध्यम से सन्तान का जन्म होता है। सम्बन्धित मन्त्र यह है-

पुरुषे ह वै अयम् आदितो गर्भो भवति। यदेतद्रेतः। तदेतत्सर्वेभ्योऽङ्गेभ्यः। तेजः संभूतम्। आत्मन्येवात्मानं बिभर्त्ति तद्यदा स्त्रियां सिञ्चत्यथैनज्जनयति तदस्य प्रथमं जन्म ॥१॥

पुरुष का वह ओज़-वीर्य नारी में जाकर स्त्री के अंग जैसा बन

जाता है, विजातीय द्रव होने पर भी वह नारी का अपना अंग हो जाता है, फलतः वह नारी को पीड़ा नहीं देता, वह नारी यह पुरुष का अंश रूप होकर उसकी आत्मा ही अपने भीतर आ गई है, इस स्नेह परिपूर्ण भावना से कुपथ्यादि का यत्नपूर्वक त्याग कर उसकी परिपालना करती है । अपने पति को ही अपने भीतर पाल रही होती है, पत्नी सन्तान के रूप में अपने पति अंश का पालन कर रही होती है । फलतः वह पति द्वारा भी पूरे उत्तरदायित्व पालन की अधिकारिणी होती है । अपने जन्म से पहले ही सन्तान कैसी हो—यह भावना करना वैदिक संस्कृति की विशिष्ट देन है । इस संसार के चक्र को चलाने के लिए ही ये लोक इस प्रकार बनाए गए हैं । वस्तुतः यह पुरुष का द्वितीय-दूसरा जन्म होता है—सम्बद्ध मन्त्र इस प्रकार है—

सा भावयित्री भावयितव्या भवति तं स्त्री गर्भं बिभर्त्ति सोऽग्र एव कुमारं जन्मनः अग्रेऽधिभावयति । स यत्कुमारं जन्मनोऽग्रे अधिभावयत्यात्मानमेव तद् भावयत्येषां लोकानां सन्तत्या एवं सन्तता हीमे लोकास्तदस्य द्वितीयं जन्म ॥३॥

पुत्र अपने संस्कारों को लेकर जन्म लेता है, एक प्रकार से पिता ही पुत्र के स्वरूप में जन्म लेता है । इसे ऋषि ने आत्मा या पुरुष का जन्म कहा है । इस प्रकार पुरुष का पहला जन्म तब होता है जब वह गर्भ में प्रविष्ट होता है, कुमार या कुमारी के रूप में जन्म लेना उसका दूसरा जन्म होता है, पुत्र के रूप में उसकी आत्मा ही पुण्य कर्मों से कृतकृत्य होकर वयोवृद्ध होकर जब यहां से प्रस्थान करता है, तब वह यहां से जाता हुआ ही पुनः उत्पन्न हो जाता है, वह आत्मा का तीसरा जन्म होता है । सम्बन्धित ऋचा देखिए—

सोऽस्याऽयमात्मा पुण्येभ्यः कर्मभ्यः प्रतिधीयते । अथास्याऽयमितर आत्मा कृतकृत्यो वयोगतः प्रैति । स इतः प्रयन्नेव पुनर्जायते तदस्य तृतीयं जन्म ॥४॥

उपनिषत्कार उदाहरण देते हुए कहते हैं—एक बार ऋषि वामदेव ने घोषणा की थी—जब मैं गर्भ में था, तब ही जान गया था कि देवताओं को अनेक जन्मों में से गुजरना पड़ता है । ऋषि स्वीकार करते हैं उन्हें सैकड़ों जन्म रूपी नगरों में इस प्रकार जाना पड़ा जैसे लोहे को जाल में बांध दिया गया हो । जिस प्रकार जाल में फंसने पर श्येन (बाज) पक्षी उसे तेजी से फाड़ देता है, वैसे मैंने जन्म-मरण रूपी इस जाल को फाड़ दिया । मन्त्र-पाठ इस प्रकार है—

तदुक्तमृषिणा—गर्भे नु सन्नन्वेषामवेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा । शतं मा पुर आयसीररक्षन्नध श्येनो जवसा निरदीयमिति। गर्भ एवैतच्छयानो वामदेव एवमुवाच ॥५॥

ऋषि वामदेव की धारणा थी कि जन्म-जन्मान्तर के चक्रव्यूह से पार होना ही मानव का लक्ष्य होना चाहिए। यह सत्य जानने के कारण ऋषि वामदेव यह काया छोड़कर ऊर्ध्वगामी होकर उसका भेदन कर अमर हो गए। सम्बन्धित मन्त्र यह है–

स एवं विद्वानस्मांच्छरीर भेदादूर्ध्वं उत्क्रम्यामुष्मिन्स्वर्गे लोके सर्वान् कामानाप्त्वाऽमृतः समभवत्समभवत् ॥६॥

इस उपनिषत् के पहले दो अध्यायों में–ब्रह्माण्ड में सृष्टि की उत्पत्ति और पिण्ड में पुरुष के जन्म की चर्चा की गई। इस तीसरे अन्तिम अध्याय में ऋषि यह जिज्ञासा प्रस्तुत करते हैं कि ब्रह्माण्ड में सृष्टि उत्पन्न करने वाला कौन है और इस पिण्ड में जीवन देने वाला कौन है ? वह आत्मा कौन सा है, जिसकी हम उपासना करें ? वह आत्मा कौन-सा है, जिसके, माध्यम से जीव संसार में रूप देखता है, जिससे यह शब्द सुनता है, जिससे यह गन्ध सूंघता है, जिसके माध्यम से वह वाणी का व्यवहार करता है, जिसके माध्यम से यह भोज्य पदार्थ स्वादु है या अस्वादु इसका भेद कर लेता है। मूल मन्त्र देखिए –

कोऽयमात्मेति वयमुपास्महे कतरः स आत्मा। येन वा रूपं पश्यति, येन वा शब्दं शृणोति, येन वा गन्धानाजिघ्रति। येन वा वाचं व्याकरोति, येन वा स्वादु चास्वादु च विजानाति ॥१॥

आत्मा का स्वरूप बतलाते हुए अगली ऋचा में कहा गया है– हृदय में काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि मन की भावनाएं, मन के विचार, हमारा सम्यक् ज्ञान, सब तरह का ज्ञान (आज्ञानम्) विशेष विषय का ज्ञान, (विज्ञानम्) उत्कृष्ट ज्ञान ये सब जिसके कारण हैं, वही आत्मा है, हम में जो आध्यात्मिक तत्त्व हैं–मेधा (बुद्धि) अन्तर्दृष्टि (दृष्टिः) धैर्य (धृति) मनन शक्ति (मतिः) सूझबूझ (मनीषा) शक्ति (जूति) स्मरण-शक्ति (स्मृतिः) निश्चय (संकल्प) कर्म-परिश्रम (क्रतुः), प्राणशक्ति (असुः) इच्छा करना (कामः) स्वतः और दूसरों को वश में करना ये सब प्रज्ञान, चेतन स्वरूप आत्मा के ही नाम या स्वरूप हैं। मूल ऋचा यह है–

यदेतद् हृदयं मनश्चैतत्संज्ञानमाज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं मेधा दृष्टिर्धृतिर्मतिर्मनीषा जूतिः स्मृतिः संकल्पः क्रतुरसुः कामो वश इति। सर्वाण्येवैतानि प्रज्ञानस्य नामधेयानि भवन्ति ॥२॥

परमात्मा के विषय में उपनिषत्कार कहते हैं–यह ब्रह्मा, यह इन्द्र, यह प्रजापति और दूसरे सब देवता, उन सब देवों के अतिरिक्त पृथिवी, वायु, आकाश, जल तथा अग्नि आदि पंच महाभूत, नेवला, सांप आदि पृथिवी आदि में मिले छोटे जीव-जन्तु, इतर प्राणियों के बीज, अण्डे से पैदा होने वाले अण्डज पक्षी, सांप आदि, जरायु से उत्पन्न होने

वाले मनुष्य, गौ, घोड़े आदि जरायुज, गर्मी से पैदा होने वाले कीट, मच्छर, मक्खी आदि स्वदेज, पृथिवी को फोड़ कर जन्म लेने वाले वृक्ष, गुल्म वनस्पति आदि उद्भिज आदि सभी प्रज्ञान-ब्रह्म हैं । घोड़े, गौएं, हाथी और जो कुछ भी प्राणि जगत् में जंगम गतिशील, उड़ने वाले पक्षी आदि तथा एक स्थान में स्थिर रहने वाले वृक्षादि स्थावर आदि सब प्रज्ञा-नेत्र हैं । ये सब प्रज्ञान में प्रतिष्ठित हैं, प्रज्ञान में ठहरे हुए हैं, प्रज्ञान ही ब्रह्म है । सम्बन्धित मन्त्र यह है–

एष ब्रह्मैष इन्द्र एष प्रजापतिरेते सर्वे देवा इमानि च पञ्च महाभूतानि पृथिवी वायुराकाश आपो ज्योतींष्येतानीमानि च क्षुद्र-मिश्राणीव बीजानीतराणि चेतराणि चाण्डजानि च जारुजानि च स्वेदजानि चोद्भिज्जानि चाश्वा गावः पुरुषा हस्तिनो यत्किञ्चेदं प्राणिजङ्गमं च पतत्रि च यच्च स्थावरं सर्वं तत्प्रज्ञानेत्रं प्रज्ञाने प्रतिष्ठितं प्रज्ञानेत्रो लोकः प्रज्ञा प्रतिष्ठा प्रज्ञानं ब्रह्म ।।३।।

इस प्रकार उपनिषत्कार ने ब्रह्म को प्रज्ञान कहा है, प्रज्ञान का अर्थ हुआ चेतनता । चैतन्य स्वरूपता ही ब्रह्म है । दिव्यशक्तियां सब तरह के भूतों के समूह, समस्त प्राणी, स्थावर, जंगम जो कुछ भी है, सब प्रज्ञानमय है–चेतनता से ओत-प्रोत । पहले आत्मा के लिए प्रज्ञान और चेतना आदि सब नाम दिए गए । (**सर्वाणि प्रज्ञानस्य नामधेयानि भवन्ति**) कहा गया, अब परमात्मा को प्रज्ञान कहा गया (प्रज्ञानं ब्रह्म) आत्मा और परमात्मा दोनों का स्वरूप प्रज्ञानं–चेतना है । जो उपासक यह सत्य जान लेता है, वह अमर पद प्राप्त कर लेता है । जिज्ञासु उपासक जब ज्ञान स्वरूप, चेतनास्वरूप प्रज्ञ आत्मा का वास्तविक स्वरूप जान गया, तब वह इस मर्त्यलोक का उत्क्रमण कर उस स्वर्गलोक में सब कामनाएं पूर्ण कर अमर हो जाता है । तीसरे अध्याय का चौथा मन्त्र इस प्रकार है–

स एतेन प्रज्ञेनात्मनाऽस्माल्लोकदुत्क्रम्यामुष्मिन्स्वर्गे लोके । सर्वान्कामानाप्त्वाऽमृतः समभवत्समभवत् ।।४।।

ऐतरेय उपनिषत् के अपने विषय का समापन करते हुए ऋषि उद्बोधन करते हैं–मेरी वाणी मन में स्थित हो, मेरा मन वाणी में प्रतिष्ठित हो, मेरी वाणी में जो बात हो, वही मन में हो, वाणी तथा मन में कोई विरोध न हो, मेरा बाह्य स्वरूप सम्मुख-प्रत्यक्ष में जो हो, वही अप्रत्यक्ष में भी हो, मेरे बाहर जो कुछ हो, वही मेरे आभ्यन्तर में हो । वेद का ज्ञान मेरी बुद्धि में बना रहे, विद्वानों से जो कुछ मैंने जाना है और समझा है, वह मेरा साथ न छोड़े, जो कुछ मैंने पढ़ा है, वह दिन-रात मेरे साथ संलग्न रहे । जब मानव का वेद का ज्ञान, श्रुति का ज्ञान और अध्ययन का ज्ञान उसमें ओत-प्रोत हो जाएगा, उस समय वह अधिकार पूर्वक

कह सकेगा कि जो कुछ मैं कहूंगा, वह ऋत कहूंगा, सत्य ही कहूंगा, वेद श्रुति-अधीत मेरी रक्षा करें, वे उपदेष्टा की रक्षा करें, मेरी रक्षा करें, वक्ता की रक्षा करें। ऋषि का अन्तिम वक्तव्य इस प्रकार है-

वाङ् मे मनसि प्रतिष्ठिता, मनः मे वाचि प्रतिष्ठितम् आविः आवीः मे एधि वेदस्य मे आवीस्थः श्रुतं मे मा प्रहासीः, अनेन. अधीतेन अहोराजान् संदधन्ति। ऋतं वदिष्यामि, सत्यं वदिष्यामि, तत् माम अवतु, तद् वक्तारमवतु, अवतु माम् अवतु वक्तारम् ॥५॥

यहां ऋषि ने संकल्प किया है वह केवल ऋत कहेंगे, केवल सत्य बोलेंगे। वैदिक वाङ्मय में ऋत तथा सत्य का अनेक स्थानों पर साथ-साथ प्रयोग किया गया है। ऋग्वेद १०,१९०-१ में **ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसः अध्यजायत**। ऋग्वेद ९,११३, २ में **ऋतवाकेन सत्येन श्रद्धया तपसा सुतः इन्द्राय इन्दो परिस्रव** यहां सत्य के विशेषण के रूप में ऋतवाक् शब्द का प्रयोग है। सत्य की वाणी में ऋत हो।

अनुशीलन वैदिक विद्वानों का निष्कर्ष यह है-ऋतवाक् हो सत्य के वचन में ऋत हो वह सत्य से ऊपरी कक्षा है। निष्कर्ष यही है कि ऋत अखण्ड ईश्वरीय विधान के लिए प्रयुक्त हुआ है और सत्य शब्द का सामाजिक विधान के लिए प्रयोग हुआ है। सामाजिक विधान तत्कालीन सामाजिक स्थिति पर आश्रित होता है, परन्तु ईश्वरीय विधान ऋत अपरिवर्तनीय अखण्ड है।

-अभ्युदय, बी-२२
गुलमोहर पार्क, नई दिल्ली-११००४१

(वेदप्रकाश) के ग्राहकों से

वेदप्रकाश न मिलने के आपके कई पत्र समय-समय पर मिलते रहते हैं। कार्यालय से बहुत सावधानी के पश्चात् दो-दो बार चैक करके अंक भेजा जाता है, फिर भी पोस्ट-ऑफिस की गड़बड़ी से कभी-कभी पाठकों को अंक नहीं पहुंच पाता। इस सम्बन्ध में पाठकों के पत्र मिलने पर अगले माह के अंक के साथ दूसरी प्रति (यदि उपलब्ध हो तो) भेज दी जाती है। यदि पोस्ट-ऑफिस को भी पत्र लिखकर शिकायत करें तो हल अवश्य निकलेगा। इतना आप विश्वास रखें कि 'वेदप्रकाश' की व्यवस्था ठीक है और यहां से प्रत्येक व्यक्ति को नियमित रूप से भेजा जाता है।

'वेदप्रकाश' के कई सदस्यों का वार्षिक चन्दा जुलाई ९५ में समाप्त हो रहा है। कृपया बीस रुपये वार्षिक शुल्क शीघ्र भेज दें। 'वेदप्रकाश' के सम्बन्ध में पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या का उल्लेख अवश्य करें। जिससे शीघ्र कार्यवाही की जा सके।

-अजयकुमार

वेद एवं दर्शनानन्दग्रन्थसंग्रह-प्रकाशन

प्रिय पाठकगण ! सुहृद् बन्धुओ !

मैंने चारों वेदों के प्रकाशन की घोषणा करा दी । स्वामी दर्शनानन्द जी के ग्रन्थ की भी घोषणा करा दी । कार्य आरम्भ भी हो गया । उधर वेद मन्दिर का निर्माण कार्य आरम्भ हो गया । उसके सामान की खरीद, देख-रेख में छह मास निकल गये । यह कार्य पूर्ण हो गया। मॉडल टाउन छोड़कर अब वेद मन्दिर इब्राहिमपुर, दिल्ली-११००३६ में स्थायी निवास हो गया है । इधर यह कार्य सम्पूर्णता की ओर आया तो आंख का ऑपरेशन कराना पड़ा । प्रभु की कृपा से ऑपरेशन सफल हो गया । चश्मा जून में मिल गया । पढ़ना-लिखना बन्द था । जून से लंगर-लगोटे कसकर इन दोनों ग्रन्थों में लग गया हूं इस वर्ष में दोनों ग्रन्थ अवश्य मिल जाएँगे ।

आप थोड़ा-सा धैर्य रक्खें । गोविन्दराम हासानन्द ६०-७० वर्ष से आर्य जगत् की सेवा कर रहा है । आपको ग्रन्थ मिलेंगे और अवश्य मिलेंगे । दर्शनानन्दग्रन्थसंग्रह को सर्वश्रेष्ठ बनाने के लिए मैं जो परिश्रम कर रहा हूं, वह आज तक तो किसी ने किया नहीं है । अब तक ज़ो अनुवाद हुए हैं, शब्द और लाइनें ही नहीं पृष्ठ के पृष्ठ भी छूटे हुए हैं । इसे सुन्दरतम रूप देना है । वेदों को भी भव्यरूप में छापना है। इन सब में समय लगता है । जिन्हें बहुत जल्दी है, उन्हें आमन्त्रण देता हूँ, कभी आश्रम में आ जाइए और देखिए, देर क्यों हो जाती है । इन दोनों योजनाओं में देरी होने से प्रकाशक को भी आर्थिक हानि का सामना करना पड़ रहा है क्योंकि आपको ज्ञात ही होगा कि पिछले छ: महीनों में कागज के मूल्यों में असाधारण वृद्धि हुई है । मूल वेद जो कि आपने लागत मात्र पर ही बुक किया है आज उसकी लागत में भी वृद्धि हो चुकी है, परन्तु फिर भी ये योजनाएं जल्दी से जल्दी पूरी की जाएंगी तथा यह ग्रन्थ उन्हीं मूल्यों पर आपको उपलब्ध होंगे जिन पर आप ने बुक किये हैं ।

अत: मुझे विश्वास है कि आप सभी ग्राहकगण धैर्य तथा विश्वास बनाए रखकर सहयोग देंगे ।

सधन्यवाद

—जगदीश्वरानन्द सरस्वती

बहुत दिनों बाद प्रकाशित पुस्तकें

जीवात्मा : *पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय ।* जीवात्मा के लक्षणं, शरीर और शरीरी, अभौतिक आत्मा, पुनर्जन्म, मुक्ति, जीव-ब्रह्म-सम्बन्ध आदि अनेक विषयों पर महत्त्वपूर्ण लेखों का संग्रह । **मूल्य :** ४०-०० रु०

प्रार्थनालोक : *स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती ।* यज्ञ से पूर्व स्तुति-उपासना के आठ मन्त्रों, प्रातःकाल पाठ करने के मन्त्रों तथा शिव संकल्प के छः मन्त्रों की सरल-सुबोध व्याख्या । **मूल्य** ४०-००

सामाजिक पद्धतियाँ : *महाशय मदनजित् आर्य ।* सन्ध्या, हवन-मन्त्र, यज्ञोपवीत, प्रथम वस्त्र परिधान, जन्म दिवस, विवाह पद्धति, सगाई पद्धति, सेहरा बन्दी, शैंत, मिलनी, गार्हपत्याग्नि-पद्धति, व्यापार-सूत्र, दुकान का मुहूर्त, अन्त्येष्टि क्रिया आदि आवश्यक सामाजिक पद्धतियों का संग्रह । **मूल्य :** १२-०० रु०

वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार : *पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार।* इस ग्रन्थ में वैदिक विचारधारा को विज्ञान की कसौटी पर परखने का प्रयत्न किया गया है, ताकि हमारी नई पीढ़ी जिन मान्यताओं को अवैज्ञानिक कह कर छोड़ती जा रही है, उन पर नई दृष्टि से सोचें । **मूल्यः** १५-०० रु०

षड्दर्शनम् : *स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती ।* वैदिक साहित्य में दर्शनों का विशेष महत्त्व है । वेद में ईश्वर, जीव, प्रकृति, पुनर्जन्म, मोक्ष-योग, कर्मसिद्धान्त यज्ञ आदि का बीजरूप में वर्णन है, दर्शनों में इन्हीं विचार-बिन्दुओं पर विस्तृत विवेचन है । **मूल्यः** १५-०० रु०

THE ONLY WAY ***by Mahatma Anand Swami Saraswati.*** The PATH which Vedas, Upnishads and Brahman Granthas expound is the PATH of TRUTH. Which we have to follow in order to avoid misery, sorrow, disease, poverty and starvation. Price Rs. 30.00

ANAND GAYATRI KATHA ***by Mahatma Anand Swami - Saraswati.*** It contains touching narration of `GAYATRI' in a very simple language, also describes the manner in which GAYATRI' is muttered. Price Rs. 30.00

नये प्रकाशन

दीप्ति : *स्वामी विद्यानंन्द सरस्वती।* अनेक विषय हैं जिन पर आर्यसमाज में विभिन्न स्तरों पर समय-समय पर विचार होता आया है, परन्तु वे आज तक विवादास्पद बने हुए हैं। लेखक ने उन्हें गम्भीरतापूर्वक विचार कर निर्णय के तट पर पहुंचाने का प्रयास किया है। **मूल्य** ८०-०० रु०

वैदिक ज्ञानधारा : *प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु।* आर्यसमाज के कई दिवंगत महात्माओं, हुतात्माओं, विचारकों, नेताओं व उपदेशकों के महत्त्वपूर्ण लेखों, भाषणों, शास्त्रार्थों व प्रवचनों का संकलन। **मूल्य :** ८०-००

बिखरे मोती : *डॉ० भवानीलाल भारतीय।* आर्य महापुरुषों के रोचक, शिक्षाप्रद संस्मरणों, शास्त्रार्थों की नोक-झोंक, आर्यों के आदर्श चरित्र को प्रख्यापित करने वाले जीवन प्रसंगों, साहित्यकारों की हास्यपूर्ण उक्तियों तथा उपदेशकों की हाजिर जवाबी को एक साथ प्रस्तुत किया गया है। **मूल्य :** ४०-०० रु०

आर्य सूक्ति-सुधा : *प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु।* महर्षि दयानन्द जी महाराज से लेकर शस्त्रार्थ महारथी श्री पं० शान्तिप्रकाश जी व श्रद्धेय पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक तक अधिक से अधिक शीर्षस्थ वैदिक विद्वानों की सूक्तियों का संग्रह, समुद्र मन्थन जैसा प्रयास है। **मूल्य** १२-००

सत्यार्थप्रकाश : (आधुनिक हिन्दी रूपान्तर) *स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती।* आज तक जितने भी संस्करण छपे हैं, उन सभी से सुन्दर अनेक टिप्पणियों से विभूषित, कठिन शब्दों के अर्थ से युक्त। अपने स्वाध्याय के लिए अपने मित्रों-संबंधियों को भेंट देने के लिए उपयोगी संस्करण। **मूल्य** १२५-०० रु०

योग-शिक्षा : (चार भागों में) **:** *डॉ० देवव्रत आचार्य।* योग का अभ्यास प्रत्येक बालक व बालिका को अनिवार्य रूप से करना चाहिए। यह पुस्तकें कक्षा सप्तम से दशम तक के छात्र-छात्राओं की शारीरिक अवस्था और मानसिक परिस्थिति के अनुसार उन्हें योग-शिक्षा का मार्गदर्शन करेगीं। विद्यार्थियों के लिए दिनचर्या, स्वस्थवृत्त, प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार-साधना, आसन क्रिया एवं स्वाध्याय का समन्वित पाठ्यक्रम बनाया है। जिसमें उनका स्वास्थ्य समुन्नत, मन एकान्त, बुद्धि कुशाग्र और मानवीय गुणों का उद्भव होगा। **मूल्य** प्रथम भाग १२-०० रु०
अन्य तीन भाग प्रत्येक १०-०० रु०

BODH KATHAYEN : *Mahatma Anand Swami Saraswati.*

Collection of didactic tales by Swamiji, each Katha delivered by Swamiji is very interesting, it encourages us to lead healthy and righteous life and provides inner peace and bliss. Swamiji's way of telling a katha is unique and he brings to bear on it the rich experience of his whole life.

Price : Rs. 40-00

HOW TO LEAD LIFE ? : *Mahatma Anand Swami Saraswati.*

Which is the best way to live in this world ? To answer this question Swamiji dealt with the various Mantras of Yajur Veda so as to explain how to drive maximum happiness out of life Swamiji says that this world is not permanent, it is in flux, human life is also temporary, so one should be ever conscious of death and should not postpone the recitation of Lord's name

Price : Rs. 30-00

बोध-कथा (पृष्ठ २ का शेष)

है ?'' बालक ने कहा–''मैं अंगुलि घुमा कर दूध से मक्खन निकाल रहा था'' बादशाह ने फिर झिड़का–''क्या दूध से इस प्रकार मक्खन निकाला जाता है ?''

बालक ने बादशाह को जवाब दिया–आप बुरा न मानें। मैं आपके पहले सवाल का जवाब दे रहा था। बादशाह ने पूछा–''यह कैसे ?'' बालक बोला–''बादशाह आप जानते हैं, दूध से मक्खन निकालने के लिए दूध में जाग लगाना पड़ता है। दही जमने पर मथानी से बिलोना पड़ता है, फिर मौसम का ख्याल कर ठण्डे-गरम पानी के छींटे देकर मक्खन निकाला जाता है। इसी प्रकार लम्बी साधना से हृदय का मन्थन कर बड़ी कोशिश कर भगवान् के दर्शन हो सकते हैं।''

बादशाह ने कहा–''यह बात तो ठीक है, पर मेरे दूसरे सवाल का जवाब क्या है ?'' बालक ने कहा–''क्या आप अपने सवाल का जवाब अपने उस्ताद या गुरु से चाहते हैं तो क्या उसे पूछने का यही ढंग होता है ?'' बादशाह अपनी गलती समझ गया। वह सिंहासन से उतर कर नीचे बैठ गया और बालक को अपनी मसनद पर बैठने के लिए बुलाया।

बालक ने कहा–''जिस तरह एक उस्ताद गुरु सबका इन्साफ-न्याय करता है, उसी प्रकार इस दुनिया का सिरजनहार भगवान् खुदा भी हर एक की अच्छाई या बुराई देखकर उनका इन्साफ करता रहता है।''

प्रस्तुति–नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

आगामी प्रकाशन

VEDIC LIGHT (A clue to the understanding of the vedas) : *Swami Vidyanand Saraswati* The vedas are the bed-rock on which the edifice of Aryan culture and civilisation has been raised- they are the quintessence of India's moral and spiritual philosophy–the fountain head of all knowledge. This small book is intended to enable the general readers to have an idea of the **Vedas** without going through the Voluminous Work.

Aryavarta (The original habitat of the Aryans) : ***Swami Vidyanand Saraswati.*** To day the greatest hurdle in the way of unity and integrity of India, is the wrong notion that the Aryans from some foreign land invaded this country. In order to understand, to recapture and live upto the best in our culture it is necessary to discover the Aryan discipline, character and outlook and to corest the the secrets of the Vedas.

Dayananad (Architect of modern India) : ***Swami Vidyanand Saraswati.*** Dayanand was a visionary, who looked for ahead of his times and visualised a society based on moral values, social justice and equality of apportunity all that in a spritual background and Indian environment. The present treatise is an eloboration of these focal points.

VEDIC CONCEPT OF GOD : *Swami Vidyanand Saraswati.* While the belief in a Supreme Power is almost universal, its concept, blurred as it is by fog of wrong notions. These descriptions often conflict with each other. Never was the need greater than today to make the people conscious of the real nature of god. The present work is a step in this direction.

संस्कारसमुच्चय : *पं॰ मदनमोहन विद्यासागर ।* पूर्णतया संशोधित तृतीय संस्करण–संस्कारों सम्बन्धी नयी सामग्री इसमें जोड़ी गई है । संस्कारविधि के सभी संस्कारों की पूरी विधि और सम्पूर्ण मन्त्रों की व्याख्या के साथ आर्यों में प्रचलित एवं समय-समय पर किये जाने वाले विविध कर्मों की विधियाँ दी गई हैं । अन्य बहुत सी प्रचलित कर्मकाण्डात्मक पद्धतियाँ बढ़ाई गई हैं ।

राष्ट्रीय वैदिक ऋचाएँ : *प्रो॰ कृष्णवल्लभ पालीवाल ।* वेदों में मातृभूमि, स्वराज्य, राज्य-व्यवस्था, राष्ट्र-निर्माण, राष्ट्रसंगठन, राष्ट्ररक्षा, सैनिक-शक्ति, युद्ध आदि विषयों पर अनेक मन्त्र हैं जो अत्यन्त प्रगतिशील व व्यावहारिक हैं । वेदों का सन्देश है–समृद्ध, तेजस्वी, विस्तृत, समान आचार संहिता वाले राष्ट्र का निर्माण । यहां केवल एक सौ पचास मन्त्रों द्वारा वैदिक राष्ट्रभक्ति की एकाकी प्रस्तुत की है ।

यज्ञ और संन्यासी

—स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

यज्ञ-विधान के अन्तर्गत सामान्य प्रकरण के आरम्भ में ऋत्विजों का लक्षण करते हुए उसमें वर्ण तथा आश्रम का उल्लेख नहीं हुआ है। परन्तु मनुस्मृति आदि प्राचीन ग्रन्थों तथा सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका तथा संस्कारविधि आदि में जहाँ कहीं भी वर्णाश्रमों के कर्त्तव्यों का निर्देश हुआ है, वहाँ सर्वत्र याजन कर्म केवल ब्राह्मण का कहा गया है। ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा संन्यास—इन तीन आश्रमों के कर्त्तव्यों में भी कहीं याजन कर्म का उल्लेख नहीं हुआ है। अतः ऋत्विक् तथा पुरोहित केवल ब्राह्मण गृहस्थ ही हो सकता है। पुरोहित के विषय में तो संस्कारविधि में जातकर्म संस्कार के अन्तर्गत टिप्पणी में ऋषि का स्पष्ट निर्देश है—"धर्मात्मा, शास्त्रोक्त विधि को पूर्णरीति से जाननेहारे, विद्वान्, सद्धर्मी, कुलीन, निर्व्यसनी, सुशील, वेदप्रिय, पूजनीय, सर्वोपकारी गृहस्थ की पुरोहित संज्ञा है।"

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में वर्णाश्रमविषय के अन्तर्गत संन्यासी के कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निर्देश करते हुए ऋषि लिखते हैं—

"शिखासूत्रादिकं हुत्वा मुनिर्मननशीलः सन् प्रव्रजति संन्यासं गृह्णाति। पूर्वेषां त्रयाणामेवाश्रमिणामनुष्ठातुं योग्यं यद् बाह्यक्रियामयमस्ति, संन्यासिनां तन्न।"

अर्थात्—शिखासूत्रादि का होम करके मनस्वी होकर संन्यास ग्रहण करता है। पहले तीन आश्रमियों के अनुष्ठान करने योग्य जो कुछ भी है, चाहे वह क्रियामय न भी हो तो भी, वह सब संन्यासी के लिए नहीं है।

इतना ही नहीं, प्रथम तीन आश्रमियों के लिए विहित पंचमहायज्ञों का उल्लेख कर प्रकारान्तर से चतुर्थाश्रमी संन्यासी के लिए उनका निषेध करते हुए, उसके लिए विहित विशेष प्रकार के पंचमहायज्ञों का विधान करते हुए स्वामी जी लिखते हैं—"एवं लक्षणाः पञ्चमहायज्ञा विज्ञानधर्मानुष्ठानमया भवन्तीति विज्ञेयम्"—संन्यासी के लिए इस प्रकार के विज्ञान और धर्मानुष्ठानवाले ही पञ्चमहायज्ञ होते हैं, ऐसा जानना चाहिए।

यज्ञोपवीत का सम्बन्ध बाह्य कर्मकाण्ड की अग्नियों से होता है। स्वामीजी के पूर्वोद्धृत निर्देश के अनुसार संन्यासी इन अग्नियों एवं तत्सम्बन्धी बाह्य कर्मकाण्डों का परित्याग कर देता है। परिणामतः इन बाह्य कर्मकाण्डों का अधिकार प्रदान करनेवाले यज्ञोपवीत के अन्यथा सिद्ध हो जाने पर वह उसे त्याग देता है।

शतपथ ब्राह्मण (२।६।१।१८) में स्पष्ट कहा है—

"ते सर्व एव यज्ञोपवीतिनो भूत्वा इत्याद्यजमानश्च ब्रह्मा च पश्चात् परीतः

पुरस्तादग्नीत्"।

अर्थात् ब्रह्मा, होता, अध्वर्यु, उद्गाता, यजमान आदि ये सब यज्ञोपवीती पश्चिम दिशा को चलते हैं और अग्नीत् पूर्व दिशा को।

इससे स्पष्ट है कि यदि संन्यासी ब्रह्मा, होता, उद्गाता, अध्वर्यु आदि कुछ भी बनेगा तो उसके लिए यज्ञोपवीती होना आवश्यक होगा, अन्यथा विधिहीन होने से यज्ञ निष्फल हो जाएगा। और यदि अब संन्यासी यज्ञोपवीत धारण करेगा तो वह संन्यास की दीक्षा लेते समय यज्ञोपवीत-त्याग की आश्रम-मर्यादा भंग करने का दोषी होगा।

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार भी 'यज्ञोपवीती एव याजयेत'। यहाँ आया 'एव' पद द्रष्टव्य एवं मन्तव्य है। इस वचन से यज्ञोपवीतधारी ही यज्ञ कराने का अधिकारी है, अन्य अर्थात् अयज्ञोपवीती कदापि नहीं। लाट्यायन श्रौतसूत्र में भी इसी मत का समर्थन करते हुए लिखा है—**"सर्वेषां यज्ञोपवीतोदकाचमते नित्ये कर्मोपयाताम्"**—१।२।४, अतः इसकी व्याख्या में स्पष्ट किया—**"सर्वेषां उद्गातृप्रभृतीनां चतुर्णामपि आर्त्विजी उपक्रमवेलायां यज्ञोपवीतमुदगाचमननं नित्यं कर्मोपयतां कर्म कुर्वताम्।"**

अर्थात्—यज्ञों में जो होता, अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मा आदि रूप से वरण किए गए ऋत्विज हैं, उनको कार्य के आरम्भ में यज्ञोपवीत-धारण, जल का आचमन आदि कार्य करने चाहिएँ। संन्यासी के सन्दर्भ में यह सब कैसे संगत होगा?

यज्ञ में कुछ आहुतियाँ ब्रह्मा को भी देनी होती हैं। यज्ञ के अन्त में प्रायश्चित्ताहुति तो ब्रह्मा को अवश्य देनी होती है। इसके बिना यज्ञ पूर्ण हुआ नहीं माना जाता और ऐतरेय ब्राह्मण के 'यज्ञोपवीती एव याजयेत' इस स्पष्ट विधान के अनुसार अयज्ञोपवीती अहुति नहीं दे सकता। इसलिए अयज्ञोपवीती संन्यासी को यज्ञ का ब्रह्मा नहीं बनाया जा सकता।

ब्रह्मा द्वारा आहुति देने का विधान गोपथ ब्राह्मण में इस प्रकार किया है—**"यस्य चैवं विद्वान् ब्रह्मा दक्षिणत उदङ्मुख आसीनो यज्ञ आहुती जुहोतीति ब्राह्मणम्"**। यहाँ ब्रह्मा के आहुति देने का विधान करते हुए प्रकारान्तर से संन्यासी की ब्रह्मा के पद पर नियुक्ति का निषेध भी कर दिया है।

इस विषय में सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभा ने व्यवस्था दी हुई है जो सभा के ७७वें वार्षिक विवरण (वर्ष १९८४-८५) में इस प्रकार अंकित है—

"१२—यज्ञ करना ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, एवं वानप्रस्थ तक ही है। संन्यास आश्रम में यज्ञ नहीं है। पुरोहित केवल गृहस्थ होता है। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी पुरोहित-कर्म नहीं करा सकते।"

जिस प्रकार वेदों, ब्राह्मणों, गृह्यसूत्रों, स्मृतियों आदि में वर्णाश्रमव्यवस्था के अन्तर्गत ब्राह्मण के कर्त्तव्य कर्मों में यज्ञ करने-कराने तथा संस्कारों में पौरोहित्य करने का विधान किया गया है, वैसा निर्देश संन्यासी के लिए कहीं नहीं मिलता। शास्त्र के विरुद्ध अपने आचरण का औचित्य सिद्ध करने के प्रयास में कुछ लोग द्रविड़ प्राणायाम करते

देखे जाते हैं। "पञ्चजनाः मम होत्रं जुषन्ताम्" (ऋ० १० । ५३ । ५) में आए 'पञ्चजनाः' पद से वे ब्राह्मणादि चार वर्णों के साथ पाँचवें 'संन्यासी' का ग्रहण करते हैं। पर 'पञ्चजन' से चार वर्ण और एक संन्यासी अभिप्रेत हैं, इसका उल्लेख कहीं नहीं मिलता। मिल भी नहीं सकता। गाय-भैंस के प्रसंग में तीसरे पदार्थ के रूप में भेड़, बकरी जैसे तत्सदृश पशु की गिनती हो सकती है, मेज़-कुर्सी की नहीं। इसी प्रकार चार वर्णों के सन्दर्भ में वर्ण नहीं तो मनुष्य-वर्ग के किसी वर्णसदृश विभाग का ग्रहण हो सकता है, आश्रम का नहीं। प्रायः विद्वानों ने तथा कोशों में पाँचवें से निषाद का ग्रहण किया है। उव्वट का लेख इस विषय में बड़ा स्पष्ट है। उनका निर्णय है—"चत्वारो वर्णाः निषाद पञ्चमः पञ्चजनः तेषां यज्ञाधिकारोऽस्ति।" आप्टे ने निषाद का अर्थ किया है—"भारत की एक जंगली आदिम जाति, जैसे—मछुए, शिकारी आदि—'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः' (वा० रा०), पतित जाति का मनुष्य, एक वर्णसंकर जाति, विशेषकर शूद्रा स्त्री से उत्पन्न ब्राह्मण का पुत्र (मनु० १० । ८)। हमारा इस अर्थ के प्रति कोई आग्रह नहीं है। परन्तु वर्णों में संन्यासी का समावेश नहीं हो सकता। यज्ञोपवीती न होने से संन्यासी को शूद्रकोटि में नहीं डाला जा सकता।

'यदि पौरोहित्य अथवा यज्ञ कराने के लिए कोई गृहस्थ न मिले तो संन्यासी से यज्ञ या संस्कार कराने में क्या आपत्ति है?' वस्तुतस्तु यह बहाना-मात्र है। हमने एक गोष्ठी में ऐसा कहनेवाले दो प्रतिष्ठित संन्यासियों से पूछा—"क्या किसी अभ्यर्थी यजमान से कभी आपने कहा है कि पहले आप किसी गृहस्थ विद्वान् की खोज करें, कोई नहीं मिलेगा तो हम करा देंगे?" दोनों ने स्वीकार किया कि हम ऐसा कभी नहीं करते। उन्हीं में से एक से हमने कहा कि अमुक स्थान पर एक ऐसे गृहस्थ विद्वान् उपस्थित थे जिन्हें आप भी अपने से अधिक योग्य मानते हैं। तब उनके रहते आपने क्यों यज्ञ कराया? इसके उत्तर में वे क्या कह सकते थे? मौन साधकर रह गए। इसीलिए हम यह कहते हैं कि यह अपनी बात रखने के लिए बहानामात्र है।

यज्ञादि करना-कराना ब्राह्मण का शास्त्रोक्त धर्म है। यही उसकी आजीविका है। उस पर भरे-पूरे परिवार के भरण-पोषण का दायित्व है। उसकी तुलना में संन्यासी की आवश्यकताएँ सर्वथा नगण्य हैं। ऐसी अवस्था में किसी संन्यासी का यज्ञादि कराना शास्त्रविरुद्ध होने से अनधिकार चेष्टा होने के साथ-साथ एक गृहस्थ ब्राह्मण के प्रति अन्याय या अत्याचार नहीं है क्या? संन्यासियों के पौरोहित्य तथा यज्ञकर्म में प्रवृत्त होने के मूल में उनकी वित्तैषणा है जिसका कोई अन्त नहीं होता।

ब्रह्मा—ब्राह्मणग्रन्थों में लिखा है—

ऋग्वेदेन होता करोति यजुर्वेदेनाध्वर्युः सामवेदेनोद्गाता अथर्वैर्वा ब्रह्मा।

अर्थात्—ऋग्वेद से होता, यजुर्वेद से अध्वर्यु, सामवेद से उद्गाता और अथर्ववेद से ब्रह्मा की नियुक्ति करे। ब्रह्मा की नियुक्ति के विषय में गोपथ ब्राह्मण (पूर्व० २ । २४) में कहा है—"**अथर्वाङ्गिरोभिर्ब्रह्मत्वम् अथर्वाङ्गिरोविद् ब्राह्मणम्**"—अथर्व से

ब्रह्मा होता है, अथर्व का जाननेवाला ब्रह्मा होता है। इसी से अथर्ववेद का एक नाम ब्रह्मवेद है। वस्तुतः ऋग्वेद से अथर्ववेद तक अर्थात् चारों वेदों का विद्वान् ब्रह्मा होता है। इसी से औपचारिक रूप में ब्रह्मा चतुर्मुख = चार मुखवाला कहलाता है। वर्तमान में सदा सर्वत्र चारों वेदों के विद्वान् ब्रह्मा का मिलना संभव नहीं। तथापि जो व्यक्ति न संस्कृत का विद्वान् है, न वेदादिशास्त्रों से परिचित है और न जिसे याज्ञिक विधि-विधान की जानकारी है, उसे ब्रह्मा के आसन पर बिठाना इस पद का अवमूल्यन करना है। इन दिनों जो हिन्दी के शब्दों का भी शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकते, ऐसे लोगों के ब्रह्मत्व में किए जानेवाले यज्ञ से किस सुफल की आशा की जा सकती है? यदि ब्रह्मा के पद के अनुरूप व्यक्ति न मिले तो यज्ञ करानेवाले को संचालक, संयोजक, निदेशक, व्यवस्थापक जैसा नाम देकर काम चला लें, किन्तु ब्रह्मा पद का उपहास करना यज्ञ का अपमान करना है।

ब्रह्मा का काम कुण्ड के दक्षिण भाग में उत्तराभिमुख होकर यज्ञ की समाप्तिपर्यन्त चुप रहकर यज्ञ का निरीक्षण करना है। होता के द्वारा अन्यथा कर्म किए जाने अथवा उद्गाता के द्वारा मन्त्रपाठ में भूल होने पर संस्कृत में निर्देश-भर करे। यज्ञ में प्रयुक्त मन्त्र परब्रह्म के शब्द हैं। उन्हीं का उच्चारण होना चाहिए। ब्रह्मा के लिए आदेश है—"**ब्रह्मन् मा त्वं वदो बहु**" (यजु:० २३।२५)—हे ब्रह्मन्! तू बहुत मत बोल। शतपथ ब्राह्मण (१।७।४।१९) में भी ब्रह्मा को चुपचाप बैठने का आदेश है। ऋषि दयानन्द ने 'भवतन्नः समनसौ०' (यजु:० ५।३) के भाष्य में लिखा है—"यज्ञ प्राकृत मनुष्यों की भाषारूपी वचन से रहित हों।"

उपर्युक्त शास्त्रवचनों से यज्ञ में वाचालता या ब्रह्मा तक का प्रवचन करना निषिद्ध है। यज्ञ के बीच में रुक-रुककर मन्त्रों की व्याख्या के माध्यम से मनोरंजन करना सर्वथा अशास्त्रीय है। हारमोनियम पर भजन बोलना, कविता करना, चुटकुले सुनाना आदि सर्वथा अनुचित है। इस व्यवस्था का उल्लंघन होने से शास्त्रीय विधि गौण होकर मनोरंजन की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है और यज्ञ की गरिमा को आघात पहुँचता है। यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म न रहकर मनोरंजन का रूप ले लेता है। यज्ञ की समाप्ति पर अच्छे स्तर पर (जो यज्ञ के अनुरूप हों) भजन और व्याख्यान कराए जा सकते हैं।

पूर्णाहुति—पूर्णाहुति करने का अधिकार यजमान को होता है और यजमान वह कहलाता है जो ऋत्विग्वरण करता है और अग्न्याधान से लेकर अन्त तक यज्ञ-कर्म में प्रवृत्त होता है। इसलिए अग्न्याधानक्रियारहित व्यक्ति को पूर्णाहुति का अधिकार नहीं है। जिसने आरम्भ नहीं किया वह अन्त या समापन कैसे कर सकता है? प्रायः पूर्णाहुति के समय यज्ञविधान के सभी नियमों को ताक में रखकर लोगों को बुला-बुलाकर आहुति डालने के नाम पर सामग्री फिंकवाना यज्ञ का उपहास करना है। न ऋत्विग्वरण किया, न विधिवत् यज्ञोपवीत धारण किया, न आचमनादि किया—यहाँ तक कि जूते खोलकर हाथ-पैर भी न धोये और हाथ बढ़ा सामग्री लेकर यज्ञकुण्ड की ओर फेंक दी। तीन-तीन

मिनट में यजमान बदलते रहते हैं—आते जाओ, चलते जाओ। ब्रह्मा या पुरोहित यज्ञोपवीत डलवा ही देते हैं तो तथाकथित यजमान आसन से उठते ही गले से निकालकर गली या सड़क में फेंक देते हैं। जो काम औरंगज़ेब तलवार के ज़ोर से न करवा सका था, वही हम आज स्वेच्छापूर्वक हँसते-खेलते कर रहे हैं। अन्त में पंक्तिबद्ध होकर ब्रह्मा के पैर छूते जाने और चढ़ावा चढ़ाते जाने अथवा दक्षिणा (उससे अतिरिक्त जो ब्रह्मा जी आर्यसमाज के अधिकारियों से प्रायः ठोक-बजाकर पहले नियत कर चुके होते हैं) देने का प्रदर्शन होता है। जैसे पौराणिक लोग मूर्ति पर दो फूल चढ़ाने को मोक्षलाभ का पासपोर्ट समझते हैं, वैसे ही आर्यसमाजी हवनकुण्ड में दो चुटकी सामग्री डालने को 'स्वर्ग का टिकट मिल गया' समझने लगे हैं। वस्तुतः इस सबके मूल में अधिकारियों तथा ऋत्विजों की लोभ की वृत्ति है। ऐसे यज्ञों से विशेष लाभ की आशा नहीं की जा सकती, क्योंकि—

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥ गीता १६।२३

—**स्वामी विद्यानन्द सरस्वती** कृत **दीप्तिः** से

मेरा वैदिक धर्म मुझे क्यों प्यारा है?

लेखक—पं० लोकनाथ तर्कवाचस्पति

संसार की सभी वस्तुएँ प्रतिक्षण बदलती रहती हैं। इसीलिए संसार को परिवर्तनशील माना गया है। यदि कोई वस्तु परिवर्तन से रहित है तो वह धर्म ही है। जड़ तथा चेतन, सब वस्तुओं में धर्म रहता है तथा वह स्वरूप से नित्य है। अतः वह परिवर्तन-चक्र से अलग है। जहाँ अग्नि होती है वहाँ प्रकाश व गर्मी भी अवश्य होगी। कारण? यह अग्नि का धर्म है और धर्म का परिवर्तित होना असम्भव है। जीवात्मा चेतन है और ज्ञान एवं प्रयत्न उसके धर्म हैं। जहाँ जीवात्मा होगा, वहाँ ज्ञान एवं प्रयत्न का होना भी निश्चित है, आवश्यक है। सत्य तथा असत्य का निर्णय करके सत्य को ग्रहण करना और असत्य का त्यागना ही आत्मा का शुद्ध स्वरूप माना जा सकता है।

झगड़ों का कारण अविद्या—इस युग के सबसे बड़े विचारक ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज के नियम बनाते हुए एक नियम यह भी बनाया है कि "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।" ऋषि दयानन्द यह चाहते थे कि यदि प्रत्येक आत्मा ज्ञान द्वारा असत्य को छोड़कर सत्य को ग्रहण कर ले तो संसार के समस्त लड़ाइयाँ-झगड़े समाप्त हो सकते हैं और संसार पुनः आनन्द व शान्ति का धाम

बन सकता है। वर्तमान के सभी झगड़ों का मूल कारण अविद्या तथा कुसंस्कार हैं। इसलिए कहना पड़ता है कि मनुष्यों ने धर्म के वास्तविक स्वरूप को नहीं समझा। धर्म तो परमात्मा का साक्षात्कार करना सिखाता और अपनी उन्नति के साथ-साथ प्राणीमात्र की उन्नति का निर्देश करता है तथा प्रेम का ऐसा सुन्दर उपदेश देता है जिसका उदाहरण मिलना कठिन है।

धर्म एक है, एक ही रहेगा—धर्म तो एक ही हो सकता है, अनेक नहीं। आज जो विभिन्न सम्प्रदाय और मत-पंथ प्रचलित हैं, उनको धर्म का नाम देना भारी भूल है। उनको मत अथवा सम्प्रदाय कहना उचित होगा। जीवात्मा स्वरूप से एक ही प्रकार के हैं, अतः उनका धर्म भी एक ही होना चाहिए। सृष्टि के आरम्भ से लेकर जब तक सृष्टि रहेगी, तब तक उनका धर्म एक ही होना चाहिए, क्योंकि धर्म परिवर्तनशील पदार्थ नहीं। यह धर्म का शुद्ध तथा वास्तविक स्वरूप है। आज जितने सम्प्रदाय प्रचलित हैं, वे जीवों के व्यावहारिक जगत् में उतरने के समय से सिद्ध नहीं हो सकते। इन सम्प्रदायों के संस्थापक व्यक्ति-विशेष हुए हैं। इनका एक निरन्तर इतिहास उपलब्ध है जो पाँच सहस्र वर्ष से आगे नहीं जाता, जबकि इस सृष्टि को उत्पन्न हुए लगभग दो अरब वर्ष हो गए हैं। इसलिए इन्हें सम्प्रदाय अथवा मत के नाम से पुकारना ही युक्तियुक्त है। यदि किसी को धर्म के नाम से पुकारा जा सकता है तो वह मनुष्यों की सृष्टि के आरम्भ से ही प्रचलित होनेवाला, प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण मेरा प्यारा वैदिक धर्म ही है जो मुझे भी प्यारा है और प्रत्येक जीव को प्यारा हो सकता है।

धर्म और न्याय एक ही है—धर्म का दूसरा नाम न्याय भी है। मेरा धर्म मुझे इसलिए भी प्यारा है कि वह मुझे न्याय करना, न्याय मानना और न्याय परखना सिखाता है। एक समय में एक से अधिक पति बनाने या मानने से यदि एक स्त्री व्यभिचारिणी कही जा सकती है, तो निश्चय ही एक मनुष्य भी एक समय में एक से अधिक स्त्रियाँ बनाने या मानने पर उसी प्रकार से दोषी समझा जाना चाहिए। यह बहुत बड़ा अन्याय है कि उपर्युक्त व्यवहार से स्त्री को अधम व पुरुष को भला माना जाय। इस प्रकार के सिद्धान्तों को माननेवाले सम्प्रदाय बुद्धिमान् व्यक्ति के लिए कभी स्वीकार करने योग्य नहीं हो सकते। मेरा धर्म इस दृष्टि से स्त्री व पुरुष को समान अधिकार देता है। मनुष्य स्वतन्त्रतापूर्वक विचरे और स्त्रियाँ घर की चारदीवारी में बन्द रहें—यह कैसा धर्म हुआ? मनुष्य तो खुले मुँह फिरें, वायु-सेवन करें तथा स्त्रियाँ मुँह पर कपड़ा डालकर फिरें—यह अनुचित है।

स्त्री-पुरुष की समानता—मेरा धर्म यह भी नहीं सिखाता कि मृत्यु के पश्चात् पुरुषों को तो किसी स्थान-विशेष पर निश्चित संख्या में कुछ वस्तुएँ प्राप्त होंगी, परन्तु स्त्री उनसे वञ्चित रखी जायगी। मेरा धर्म न्याय के अनुसार यह बताता है कि यदि स्त्री के मर जाने पर पुरुष के लिए दूसरी स्त्री का विधान शास्त्र के अनुसार उचित है, तो पति के मर जाने पर स्त्री के लिए भी दूसरे पति का विधान उचित है। जो विधि एक के लिए है वही दूसरे के लिए भी। स्त्री और पुरुष में भेद नहीं है।

परमात्मा न्यायकारी है—मेरा धर्म यह स्वीकार नहीं करता कि परमात्मा कोई काम न्याय के विरुद्ध करते हैं। खोटे कर्म करनेवाले को बिना दण्ड दिये क्षमा कर देता है और शुभ कर्मों का फल दुःख-कष्ट के रूप में किसी को दे सकता है, अथवा बिना कर्म किये किसी को राजा, किसी को रङ्क, किसी को विद्वान्, किसी को मूर्ख, किसी को गऊ, किसी को सिंह, किसी को मृग, किसी को शूकर, स्वेच्छा से जो चाहे बना सकता है—ये सब बातें न्याय की कसौटी पर कसने से थोथी, मिथ्या तथा धर्म-विरुद्ध लगती हैं। मेरा वैदिक धर्म इस प्रकार की न्याय-विरुद्ध बातों से सर्वथा ऊँचा है और स्त्री-पुरुषों के समान अधिकारों का विधान करता है। सार यह कि मेरा धर्म न्याय मानने, न्याय करने और न्याय परखने की सच्ची कसौटी है।

समाज-व्यवस्था—मेरा धर्म यह शिक्षा देता है कि यदि कोई ब्राह्मण के घर में जन्म लेकर खोटे कर्म करता है तो उसे गुण, कर्म, स्वभावानुसार ब्राह्मण न मानकर क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा अतिशूद्र मानना चाहिए। इसी प्रकार शूद्र तथा अतिशूद्र को भी वैश्य, क्षत्रिय तथा ब्राह्मण तक बनने का अधिकार देता है। जन्म से किसी को ऊँचा-नीचा नहीं माना गया। यह गुण-कर्म-स्वभाव अनुसार ही वर्ण प्रदान करता है।

सबको विद्या-प्राप्ति का अधिकार—मेरा धर्म यह भी सिखाता है जैसे पुरुष सत्य शास्त्रों के ज्ञान को प्राप्त करके मोक्ष-पद को प्राप्त कर सकता है, इसी प्रकार स्त्रियाँ भी ज्ञान प्राप्त करके वैराग्य द्वारा मुक्तिधाम तक पहुँच सकती हैं। स्त्री व शूद्रों को विद्या-प्राप्ति का अधिकार नहीं है, उन्हें मूर्ख ही रहना चाहिए, भगवान् ने इन्हें मूर्ख रहने के लिए ही पैदा किया है—इस प्रकार की न्याय-विरुद्ध बातों की मेरे धर्म में क़तई कोई गंध नहीं है। अतः मेरा धर्म मुझे प्यारा है और प्राणीमात्र को भी इससे प्रेम करना चाहिए।

मनुष्यों को धार्मिक बनने का उपदेश वेदशास्त्रों में भली-भाँति मिलता है। धार्मिक बनने का प्रयोजन परमात्मा की प्राप्ति बतलाया गया है। परमात्मा को सर्वत्र व्यापक माना गया है। जो लोग ईश्वर की सत्ता को मानते हैं वे यह भी मानते हैं कि ईश्वर सर्वत्र व्यापक है। यद्यपि कुछ लोग ईश्वर को सर्वत्र व्यापक मानते हुए भी चौथे व सातवें आसमान (God In The Heaven) पर उसका निवास बताते हैं, परन्तु ईश्वर-विश्वासी कभी उसकी सर्वव्यापकता से इन्कार नहीं करते तथा परमात्मा के ज्ञान की प्राप्ति को मनुष्यमात्र के उद्धार का कारण मानते हैं। परमात्मा प्राप्त कैसे हो सकता है ? इसके लिए विभिन्न लोगों ने भिन्न-भिन्न मार्ग माने हैं। कई लोगों का विचार है कि परमात्मा व जीवात्मा को मिलाने के लिए एक तीसरे व्यक्तित्व की आवश्यकता है; बिना उसके जीवात्मा की परमात्मा तक पहुँच कठिन है। कई लोग मनुष्य आदि प्राणियों की बलि को ईश्वर-दर्शन का साधन मानते हैं। परन्तु मेरा धर्म बताता है कि परमात्मा को प्राप्त करने के लिए आत्मा को न किसी व्यक्ति (Mediator, Prophet) की आवश्यकता है और न किसी अन्य वस्तु की। आत्मा के भीतर परमात्मा सदा व्यापक रहता है। अविद्या, राग, द्वेष आदि के कारण आत्मा प्रभु के साक्षात्कार करने में असमर्थ होता है।

ईश्वर-मिलाप कैसे?—यम-नियम आदि योग-अंगों के द्वारा राग-द्वेष आदि का नाश करके आत्मा को परमात्मा के दर्शन हो जाते हैं। तब उपनिषद् के इस कथन के आधार पर कि 'परमात्मा के दर्शन हृदय-आकाश में होते हैं' उसकी प्राप्ति के लिए उपर्युक्त साधनों की आवश्यकता नहीं। जैसे परमात्मा मन्दिर में, वैसा हृदय में। किसी ने कहा भी है—

दिल के दर्पण में धरी तस्वीरे-यार
जब ज़रा गर्दन झुकाई देख ली

मेरा धर्म ही यह निश्चय करा सकता है कि ईश्वर एक है, सर्वव्यापक है, अभेद है, अच्छेद्य है, सबसे महान् और सर्वशक्तिमान् है। वह सदा एकरस रहता है। सबको सब स्थानों पर मिल सकता है। ईश्वर के ऐसे गुण केवल वैदिक धर्म में मिलते हैं, अतः वह मुझे प्यारा है।

प्राणीमात्र से प्यार की शिक्षा—मेरा धर्म मुझे प्राणीमात्र से प्रेम करना सिखाता है। किसी की जान लेकर ऊँचा चढ़ना नहीं सिखाता। संसार के लोग दूसरों के अस्थि-पिंजरों पर खड़ा होकर ऊँचा बनना चाहते हैं, परन्तु मेरा धर्म अपने अस्थि-पिंजरों पर दूसरों को खड़ा करके ऊँचा बनना सिखाता है। मैं इसमें चमत्कार देखता हूँ जो अन्यत्र कहीं देखने में नहीं आता। इसलिए मैं वैदिक धर्म से प्यार करता हूँ और संसार के लोगों को इसे स्वीकार करने का निमन्त्रण देता हूँ ताकि वे वास्तविक शान्ति को प्राप्त कर सकें।[१]

---

१. आर्य मुसाफ़िर' उर्दू मासिक सन् १९३१ के जुलाई के अंक में प्रकाशित।

—प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु कृत वैदिक ज्ञान धारा से

हमारे प्रकाशन

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

आनन्द गायत्री कथा	१४-००
एक ही रास्ता	१२-००
शंकर और दयानन्द	८-००
मानव जीवन-गाथा	१३-००
सत्यनारायण व्रत कथा	५-००
भक्त और भगवान्	१२-००
उपनिषदों का सन्देश	१८-००
घोर घने जंगल में	२०-००
मानव और मानवता	३०-००
प्रभु मिलन की राह	२०-००
यह धन किसका है ?	२२-००
बोध-कथाएँ	१८-००
दो रास्ते	१७-००
दुनिया में रहना किस तरह ?	१५-००
तत्त्वज्ञान	२०-००
प्रभु-दर्शन	१५-००
प्रभु-भक्ति	१२-००
महामन्त्र	१२-००
सुखी गृहस्थ	७-००
त्यागमयी देवियाँ	८-००

MAHATMA ANAND SWAMI

Anand Gayatri Katha	30-00
The Only Way	30-00
Bodh Kathayen	40-00
How To Lead Life ?	30-00

महर्षि दयानन्द

व्यवहारभानु	४-००
स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश	१-५०
आर्योद्देश्यरत्नमाला	१-५०

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

महाभारतम् (तीन खण्ड)	६००-००
वाल्मीकि रामायण	१७५-००
षड्दर्शनम्	१५०-००
चाणक्यनीतिदर्पण	६०-००
विदुरनीति: (हिन्दी-संस्कृत-अंग्रेजी)	४०-००
ब्रह्मचर्य गौरव	९-००
विद्यार्थियों की दिनचर्या	९-००
कुछ करो कुछ बनो	१२-००
मर्यादा पुरुषोत्तम राम	१२-००
आदर्श परिवार	१५-००
दयानन्द सूक्ति और सुभाषित	२५-००
वैदिक विवाह-पद्धति	८-००
ऋग्वेद सूक्ति-सुधा	२५-००
अथर्ववेद सूक्ति-सुधा	१५-००
सामवेद सूक्ति-सुधा	१२-००
ऋग्वेदशतकम्	१०-००
यजुर्वेदशतकम्	१०-००
सामवेदशतकम्	१०-००
अथर्ववेदशतकम्	१०-००
भक्ति संगीतशतकम्	६-००
चमत्कारी औषधियाँ	१५-००
घरेलू औषधियाँ	१५-००
चतुर्वेदशतकम् (सजिल्द)	५०-००
स्वर्ण पथ	१२-००
प्रभात-वन्दन	८-००
प्रार्थना-प्रकाश	८-००
शिवसंकल्प	८-००
प्रार्थनालोक (सजिल्द)	४०-००

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

वेद-सौरभ	१२-००
सत्यार्थप्रकाश (सा॰)	१२५-००
सत्यार्थप्रकाश (विशेष)	२००-००

आचार्य उदयवीर शास्त्री

न्यायदर्शन भाष्य	१५०-००
वैशेषिकदर्शन भाष्य	१२५-००
सांख्यदर्शन भाष्य	१२५-००
योगदर्शन भाष्य	१००-००
वेदान्तदर्शन भाष्य (ब्रह्मसूत्र)	१८०-००
मीमांसादर्शन	३५०-००
सांख्यदर्शन का इतिहास	२५०-००
सांख्य सिद्धान्त	२००-००
वेदान्तदर्शन का इतिहास	२००-००
प्राचीन सांख्य सन्दर्भ	१००-००
वीर तरंगिणी (लेखों का संग्रह)	२५०-००

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

आदि शंकराचार्य वेदान्ती नहीं थे	४०-००
सृष्टि विज्ञान और विकासवाद	४०-००
वेद मीमांसा	५०-००
दीप्तिः	८०-००

पं॰ गंगाप्रसाद उपाध्याय

शतपथब्राह्मण (तीन खण्ड)	१८००-००
सन्ध्या : क्या, क्यों, कैसे	१५-००
विवाह और विवाहित जीवन	१८-००
जीवात्मा	४०-००

प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

ब्रह्मचर्य सन्देश	२५-००
वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार	१५०-००

प्रा॰ राजेन्द्र जिज्ञासु

महात्मा हंसराज	६०-००
महात्मा हंसराज ग्रन्थावली (४ खण्ड)	२४०-००
आर्य सूक्ति-सुधा	१२-००
वैदिक ज्ञान-धारा	८०-००

डा॰ भवानीलाल भारतीय

कल्याण मार्ग का पथिक	प्रेस में
स्वामी श्रद्धानन्द ग्रन्थावली (ग्यारह खण्डों में)	६६०-००
आर्यसमाज के बीस बलिदानी	१५-००
श्याम जी कृष्ण वर्मा	२४-००
आर्यसमाज विषयक साहित्य परिचय	२५-००
बिखरे मोती	४०-००

स्वामी वेदानन्द सरस्वती

ऋषि बोध कथा	१०-००
वैदिक धर्म	२५-००

सुरेशचन्द्र वेदालंकार

ईश्वर का स्वरूप	प्रेस में
सहेलियों की वार्ता	२०-००

ले॰ देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय
अनु॰ पं॰ घासीराम

महर्षि दयानन्द चरित	२५०-००

क्षितीश वेदालंकार

चयनिका	१२५-००

पं॰ रामनाथ वेदालंकार

वैदिक मधुवृष्टि	६०-००

आ॰ प्रियव्रत वेदवाचस्पति

वेदोद्यान के चुने हुए फूल	५०-००

पं॰ चन्द्रभानु सिद्धान्ताभूषण

महाभारत सूक्ति-सुधा	४०-००

डॉ॰ प्रशान्त वेदालंकार

धर्म का स्वरूप	५०-००

पं॰ विश्वनाथ विद्यालंकार

सन्ध्या रहस्य	२५-००

प्रो॰ रामविचार एम॰ ए॰

आर्यसमाज का कायाकल्प कैसे हो ?	४-००

प्रो॰ नित्यानन्द पटेल

पूर्व और पश्चिम	३५-००
सन्ध्या विनय	६-००

पं॰ नन्दलाल वानप्रस्थी

गीत सागर	२५-००

पं॰ वा॰ विष्णुदयाल (मॉरीशस)

वेद भगवान् बोले १५-००

आ॰ उदयवीर शास्त्री

आचार्य शंकर का काल १०-००

पं॰ वीरसेन वेदश्रमी

याज्ञिक आचार संहिता ४५-००

नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

प्रेरक बोध-कथाएँ १५-००

कवि कस्तूरचन्द

ओंकार गायत्रीशतकम् ३-००

पं॰ सत्यपाल विद्यालंकार

श्रीमद् भगवद्गीता १५-००

कर्मकाण्ड की पुस्तकें

आर्य सत्संग गुटका ४-००

पंचयज्ञप्रकाशिका ८-००

वैदिक सन्ध्या २-००

सामाजिक पद्धतियाँ (मदनजीत आर्य) १२-००

सन्ध्या-हवन दर्पण (उर्दू) ८-००

Vedic Prayer 3-00

WORKS OF SVAMI SATYA PRAKASH SARASVATI

Founders of Sciences in Ancient India (Two Vols.) 800-00

Coinage in Ancient India (Two Vols.) 600-00

Geometry in Ancient India 350-00

Brahmgupta and His Works 350-00

God and His Divine Love 5-00

The Critical, Cultural Study of Satapath Brahman In Press

Speeches, Writings & Addresses

Vol. I : VINCITVERITAS 150-00

Vol.II : ARYA SAMAJ : A RENAISSANCE 150-00

Vol. III : DAYANAND : A PHILOSOPHER 150-00

Vol. IV : THREE LIFE HAZARDS 150-00

जीवनी

महात्मा आनन्द स्वामी (उर्दू) १०-००

महात्मा आनन्द स्वामी (हिन्दी) २५-००

बाल साहित्य

त्रिलोकचन्द विशारद

महर्षि दयानन्द ५-००

गुरु विरजानन्द ४-५०

स्वामी श्रद्धानन्द ४-५०

धर्मवीर पं॰ लेखराम ५-००

मुनिवर पं॰ गुरुदत्त ५-००

स्वामी दर्शनानन्द ५-००

प्रा॰ राजेन्द्र जिज्ञासु

महात्मा हंसराज ४-५०

स्वामी स्वतन्त्रानन्द ४-५०

महात्मा नारायण स्वामी ५-५०

देवतास्वरूप भाई परमानन्द ५-५०

स्वामी दर्शनानन्द

कथा पच्चीसी ९-००

बाल शिक्षा २-५०

सुनील शर्मा

हमारे बालनायक ८-००

देश के दुलारे ९-००

हमारे कर्णधार ८-००

सत्यभूषण वेदालंकार एम॰ ए॰

नैतिक शिक्षा-प्रथम २-५०

नैतिक शिक्षा-द्वितीय ३-००

नैतिक शिक्षा-तृतीय ४-५०

नैतिक शिक्षा-चतुर्थ ५-००

नैतिक शिक्षा-पंचम ४-५०

नैतिक शिक्षा-षष्ठ ५-५०

नैतिक शिक्षा-सप्तम ५-५०

नैतिक शिक्षा-अष्टम ५-५०

नैतिक शिक्षा-नवम ८-००

नैतिक शिक्षा-दशम ८-००

नीरू शर्मा		**डॉ॰ देवव्रत आचार्य**	
आदर्श महिलाएँ	८-००	योग शिक्षा–प्रथम	१२-००
हरिश्चन्द्र विद्यालंकार		योग शिक्षा–द्वितीय	१०-००
वैदिक शिष्टाचार	३-००	योग शिक्षा–तृतीय	१०-००
पं॰ रामगोपाल विद्यालंकार		योग शिक्षा–चतुर्थ	१०-००
दयानन्द चित्रावली	२५-००	**म॰ नारायण स्वामी**	
ब्र॰ नन्दकिशोर		प्राणायाम-विधि	२-००
आचार्य गौरव	५-००		

घर का वैद्य

जब प्रकृति की अनमोल दवाइयां आपको उपलब्ध हों तो पुड़िया आदि की क्या जरूरत है ।

घर का वैद्य–प्याज	७-००	घर का वैद्य–हल्दी	७-००
घर का वैद्य–लहसुन	७-००	घर का वैद्य–बरगद	७-००
घर का वैद्य–गन्ना	७-००	घर का वैद्य–दूध-घी	७-००
घर का वैद्य–नीम	७-००	घर का वैद्य–दही-मट्ठा	७-००
घर का वैद्य–सिरस	७-००	घर का वैद्य–हींग	७-००
घर का वैद्य–तुलसी	७-००	घर का वैद्य–नमक	७-००
घर का वैद्य–आँवला	७-००	घर का वैद्य–बेल	७-००
घर का वैद्य–नींबू	७-००	घर का वैद्य–शहद	७-००
घर का वैद्य–पीपल	७-००	घर का वैद्य–फिटकरी	७-००
घर का वैद्य–आक	७-००	घर का वैद्य–साग-भाजी	७-००
घर का वैद्य–गाजर	७-००	घर का वैद्य–अनाज	७-००
घर का वैद्य–मूली	७-००	घर का वैद्य–फल-फूल	७-००
घर का वैद्य–अदरक	७-००	घर का वैद्य–धूप-पानी	१५-००

सभी छब्बीस पुस्तकें छः आकर्षक जिल्दों में भी उपलब्ध, कीमत ४५ रुपये प्रत्येक

घर का वैद्य (प्याज, लहसुन, गन्ना, नीम, सिरस)
घर का वैद्य (तुलसी, आँवला, नींबू, पीपल, आक)
घर का वैद्य (गाजर, मूली, अदरक, हल्दी,बरगद)
घर का वैद्य (दूध-घी, दही-मट्ठा, हींग, नमक, बेल)
घर का वैद्य (शहद, अनाज, साग-भाजी, फल-फूल, फिटकरी)
घर का वैद्य–धूप-पानी ४०-००

अन्य प्रकाशन

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार

आर्यसमाज का इतिहास (भाग १)	३२५-००
आर्यसमाज का इतिहास (भाग २)	३२५-००
आर्यसमाज का इतिहास (भाग ३)	३२५-००
आर्यसमाज का इतिहास (भाग ४)	३२५-००
आर्यसमाज का इतिहास (भाग ५)	३२५-००
आर्यसमाज का इतिहास (भाग ६)	३२५-००
आर्यसमाज का इतिहास (भाग ७)	३२५-००
प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग	५६-००
दक्षिणी-पूर्वी और दक्षिणी एशिया में भारतीय संस्कृति	५८-००
पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी एशिया का आधुनिक इतिहास	७७-००
मध्य एशिया व चीन में भारतीय संस्कृति	५८-००
प्राचीन भारत	६९-००
भारतीय संस्कृति का विकास	७७-००
प्राचीन भारत का धार्मिक सामाजिक और आर्थिक जीवन	५६-००
प्राचीन भारत की शासन संस्थाएँ और राजनीतिक विचार	५८-००
एशिया का आधुनिक इतिहास	११०-००
यूरोप का इतिहास	१२०-००
समाजशास्त्र	८०-००
चाणक्य	६५-००
पतन और उत्थान	३५-००
मौर्य साम्राज्य का इतिहास	९०-००
भारत का इतिहास	११०-००
विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ	१७५-००
मध्यकालीन भारत	१३०-००
प्राचीन भारत का सांस्कृतिक इतिहास	३२५-००
Political Thought of Swami Dayanand	150-00

डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

एकादशोपनिषद्	१२५-००
उपनिषत् प्रकाश	११०-००
श्रीमद् भगवद्गीता	१०५-००
संस्कारचन्द्रिका	१२०-००
बुढ़ापे से जवानी की ओर	९५-००
होमियोपैथिक चिकित्सा	१२५-००
होमियोपैथिक चित्रण	१२५-००
होमियोपैथी का क ख ग	१००-००
होमियोपैथी के मूल सिद्धान्त	८०-००
वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्व	४०-००
From old age to youth through Yoga	80-00
चतुर्वेद गंगालहरी	९५-००
मेरी नानी की कहानी	३५-००
मां और बच्चा	२५-००

स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

अग्निहोत्र सर्वस्व	१०-००
उपहार सर्वस्व	५-००
मृत्युञ्जय सर्वस्व	१०-००
स्वाध्याय सर्वस्व	१२-००
उपनयन सर्वस्व	१०-००
दो पुटन के बीच	५-००
ए लविंग टोकन	५-००

महर्षि दयानन्द

सत्यार्थप्रकाश	५०-००
संस्कारविधि	१०-००
ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	४०-००
उपदेशमञ्जरी	१०-००

पं॰ रामनाथ वेदालंकार

सामवेद (पूर्व॰, उत्तरार्ध)	४००-००
आर्ष ज्योति	५०-००
वेद मञ्जरी	५०-००
वैदिक नारी	४०-००

स्वामी योगेश्वरानन्द

बहिरंग योग	७०-००
आत्मविज्ञान	८०-००
ब्रह्मविज्ञान	१००-००
दिव्य ज्योति विज्ञान	४०-००
प्राण विज्ञान	३०-००
दिव्य शब्द ज्ञान	६०-००
निर्गुण ब्रह्म	३०-००
व्याख्यानमाला (५ भाग)	१५०-००
हिमालय का योगी -I	८०-००
हिमालय का योगी -II	७५-००
First Step to Higher Yoga	70-00
Science of Soul	80-00
Science of Divinity	100-00
Science of Divine Light	45-00
Science of Vital Force	40-00
The Essential Colourlessness of the Absolute	40-00
Science of Divine Sound	40-00
Beads of Sermons	30-00
Himalaya Ka Yogi-I	80-00
Himalaya Ka Yogi-II	80-00

डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी

सुखी जीवन	१८-००
सुखी गृहस्थ	१२-५०
सुखी परिवार	१८-००
आचार शिक्षा	१०-००
नीति शिक्षा	१०-००
वेदों में नारी	२०-००
सुखी समाज	१८-००
वैदिक मनोविज्ञान	१८-००
यजुर्वेद सुभाषितावली	२५-००
सामवेद सुभाषितावली	२५-००
अथर्ववेद सुभाषितावली	३५-००
ऋग्वेद सुभाषितावली	४०-००
वेदों में आयुर्वेद	९०-००
Vedic Samdhya & Agnihotra	30-00
The Essence of the Vedas	200-00

चमूपति एम॰ ए॰

योगेश्वर कृष्ण	४०-००
वैदिक स्वर्ग	३०-००
वैदिक दर्शन	१५-००
अनादि तत्त्व	२५-००
विचार वाटिका (दो भाग)	१००-००

पं॰ भगवद्दत्त

सविता देवता	५९-००
बृहस्पति देवता	६०-००

पं॰ शिवकुमार शास्त्री

श्रुतिसौरभ	६०-००

आचार्य अभयदेव वेदालंकार

वैदिक विनय	१२५-००

स्वामी समर्पणानन्द

पञ्चयज्ञप्रकाश	१५-००
श्रीमद् भगवद्गीता	२०-००

पं॰ सुरेन्द्रकुमार

विशुद्ध मनुस्मृति	८०-००
मनुस्मृति	१५०-००

Svami Satya Prakash Sarasvati

Rigveda (13 vols)	2700-00
Athervaveda (4 vols)	900-00
Samveda (2 vols)	450-00
Yajurveda (1 vol)	225-00

स्वामी जगदीश्वरानन्द

देवर्षि दयानन्द चरित	२५-००
सामवेद भाष्य	१००-००

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

भूमिकाभास्कर (दो खण्ड)	३००-००
सत्यार्थभास्कर (दो खण्ड)	७००-००
संस्कारभास्कर	१५०-००
तत्त्वमसि	५०-००
आर्यों का आदि देश और उनकी सभ्यता	६०-००
Ishopanishad	25-00
Brahmasutra	150-00
गौ की गुहार	१५-००
आर्य सिद्धान्तविमर्श	२०-००

वीरेन्द्रसिंह परमार

जीवात्मा ४०-००

मैक्समूलर

भारत की विश्व को देन १३०-००

प्रो॰ रामविचार एम॰ ए॰

वेदसन्देश (दो खण्ड) १००-००

रमेश मुनि वानप्रस्थ

वैदिक यज्ञानुष्ठानविधि: ८०-००

डॉ॰ देवव्रत आचार्य

आसन प्राणायाम वैज्ञानिक विवेचन एवं चिकित्सा ४०-००

रामप्रकाश भसीन

मानव जीवन की सफलता के साधन २०-००

सुख सागर १५-००

पी॰ एन॰ ओक

आगरा का लालकिला हिन्दू भवन है ३५-००

वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास-१ ४५-००

वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास-२ ४५-००

वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास-३ ४५-००

वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास-४ ४५-००

दिल्ली का लालकिला लालकोट था २५-००

ताजमहल मन्दिर भवन है ३५-००

भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें ४५-००

कौन कहता है अकबर महान् था? ५०-००

विश्व इतिहास के विलुप्त अध्याय ३०-००

वीर सावरकर साहित्य

१८५७ का भारतीय स्वातन्त्र्य समर ११०-००

मेरा आजीवन कारावास ९५-००

कालापानी ३५-००

मोपला (उपन्यास) ऐतिहासिक १६-००

गोमान्तक (उपन्यास) ऐतिहासिक १६-००

हिन्दुत्व (नया संस्करण) १५-००

स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती

आर्यसमाज सिद्धान्त और प्रगति ४०-००

आर्यसमाज संघर्ष और समस्याएँ ३५-००

A critical study of Philosophy of Dayanand 50-00

डॉ॰ भवानीलाल भारतीय

नवजागरण के पुरोधा: दयानन्द ६०-००

ऋषि दयानन्द के भक्त, प्रशंसक और सत्संगी २०-००

डॉ॰ ओमप्रकाश वेदालंकार

मृत्यु से अमृत की ओर १३-००

आर्यों का परम धर्म ७-००

डी॰ ए॰ वी॰ प्रकाशन

महर्षि दयानन्द और उनके अनुवर्ती ५०-००

सूक्तियाँ (हिन्दी-संस्कृत-अंग्रेजी) ४०-००

प्रेरक प्रवचन (महात्मा हंसराज) ३५-००

क्रान्तिकारी भाई परमानन्द ५०-००

Swami Dayanand 35-00

Story of My Life (Lajpat Rai) 50-00

Mahatma Hansraj 35-00

Rishi Dayanand Saraswati 30-00

Reminiscences and Reflections of a Vedic Scholar (Prof. Satyavrat) 60-00

The Arya Samaj (Lajpat Rai) 50-00

Wisdom of Vedas 35-00

Swami Dayanand through Non Arya Samajist Eyes 75-00

Chips from a Vedic Workshop 80-00

आयुर्वेद-स्वास्थ्य

आयुर्वेद नवनीत ६५-००

आयुर्वेद चिकित्सा सार ३०-००

भोजन द्वारा चिकित्सा ४०-००

शाकाहारी व्यंजन विधियाँ ५०-००

अनुभूत चिकित्सा योग ३०-००

ब्र॰ नन्दकिशोर

मातृ गौरव ५-००

सत्संग गौरव ६-००

पितृ गौरव ८-००

विजय बिहारीलाल माथुर

आर्यसमाज के नियमों की व्याख्या (हिन्दी) १५-००

आर्यसमाज के नियमों की व्याख्या (अंग्रेजी) १५-००

विविध प्रकाशन

ऋग्वेदभाष्यम् (पांच भाग)	५८०-००
अथर्ववेदभाष्यम् (दो भाग)	२२५-००
सामवेदभाष्यम् (एक भाग)	९०-००
यजुर्वेदभाष्यम् (एक भाग)	१२५-००
वैदिक सम्पत्ति	१२५-००
कुलियात आर्य मुसाफिर	२००-००
मृत्यु और परलोक	१६-००
योग रहस्य	१४-००
पं० रामचन्द्र देहलवी लेखावली	१८-००
आर्य पर्व-पद्धति	१६-००
आर्य सिद्धान्त सागर	१२५-००
वैदिक यज्ञ-दर्शन	६०-००
संगीत रत्न प्रकाश	५०-००
मोक्ष द्वार	२५-००
What is Arya Smaj	30-00
Journey of the Soul	35-00
Science in the Vedas	25-00
Rigveds (5 Vols.)	420-00
Atharvveda (2 Vols.)	130-00
Samveda	65-00
Yajurveda	125-00

चित्र

स्वामी दयानन्द १६"X२२" बहुरंगी	६-००
स्वामी दयानन्द (कुर्सी) १८"X२२"	३-००
स्वामी दयानन्द (आसन) १८"X२२"	३-००
स्वामी श्रद्धानन्द १८"X२२" एक रंग	३-००
गुरु विरजानन्द १८"X२२" एक रंग	३-००
पण्डित लेखराम १८"X२२" एक रंग	३-००
स्वामी दर्शनानन्द १८"X२२" एक रंग	३-००
गुरुदत्त विद्यार्थी १८"X२२" एक रंग	३-००
महात्मा हंसराज १८"X२२" एक रंग	३-००

कैलेण्डर १९९५

महर्षि दयानन्द का झण्डे वाला बहुरंगी चित्र	६-००

(५००-०० रु० सैकड़ा)

गोग्रास

आप गोभक्त हैं, गाय को माता सदृश मानते हैं। गाय की सेवा करना चाहते हैं। आप गाय पालना चाहते हैं परन्तु ऐसी परिस्थितियां नहीं कि आप गाय पाल सकें।

आपकी भावनाओं के अनुरूप
गायों की सेवा कर रहा है –

हासानन्द वर्मा गोचर भूमि ट्रस्ट, मथुरा

आप एक सौ रुपये मासिक **'गो-ग्रास'** देने का संकल्प कीजिए। हर मास मात्र एक सौ गायों के चारे के लिए भेजिए।

या फिर

आप एक वर्ष के लिए एक हजार रुपये गो-ग्रास के लिए भेजें। और अधिक आप भेजना चाहें, अधिक भेजिए। कम भेजिए या ज्यादा, भेजिए अवश्य।

प्रबन्धक : हासानन्द वर्मा गोचरभूमि ट्रस्ट, ७०१ गऊघाट, मथुरा

पुस्तक परिचय

आदि शंकराचार्य वेदान्ती नहीं थे—स्वामी विद्यानन्द सरस्वती। शंकराचार्य मूलत: वेदान्ती या अद्वैतवादी नहीं थे। ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में इसका संकेत मिलता है। स्वामी जी ने इस मान्यता की पुष्टि में शंकराचार्य के ग्रन्थों से अनेक प्रमाण उद्धृत किये हैं।

आर्यसमाज के बीस बलिदानी—डॉ० भवानीलाल भारतीय। आर्यसमाज पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाने वाले उन बीस आर्यों की संक्षिप्त बालोपयोगी जीवनियाँ, जिन्हें पढ़कर बच्चों, नवसाक्षरों तथा प्रौढ़ों को सत्प्रेरणा मिलेगी। पुरस्कार, उपहार देने योग्य।

आचार्य गौरव—ब्र० नन्दकिशोर। आचार्य-शिष्य सम्बन्धों की मार्मिक झांकी प्रस्तुत की गई है। जहां शिष्यों को कर्त्तव्य-बोध कराया गया है, वहीं आचार्यों को राष्ट्र-निर्माण की दिशा भी दिखाई गई है।

प्रेरक बोध कथाएँ—नरेन्द्र विद्यावाचस्पति। इस संकलन की कथाएँ जितनी वामन (लघु) हैं, उनका उद्देश्य और प्रभाव उतना ही विराट् एवं व्यापक है। प्रत्येक कथा अपनी अमिट छाप छोड़ती है और पाठक को वैसा ही कुछ करने के लिए यत्नशील बनाती है।

वेद भगवान बोले—पं० विष्णुदयाल (मॉरीशस)। वेद वैदिक संस्कृति का मूलाधार है। संसार में जितना ज्ञान-विज्ञान, विद्याएं और कलाएं हैं, उन का आदि स्रोत वेद हैं। मॉरीशसवासी पं० विष्णुदयाल के वेदों पर किए गये महत्त्वपूर्ण लेखों का संग्रह।

दयानन्द चित्रावली—पं० रामगोपाल विद्यालंकार। महर्षि दयानन्द की जीवन-घटनाओं से सम्बन्धित बड़े साइज के ३० से भी अधिक रंग-विरंगे चित्रों से सुसज्जित। ऋषि की प्रभावशाली उपदेशप्रद घटनाओं का वर्णन भी बड़े अक्षरों में किया गया है। पाठशाला में विद्यार्थियों को पुरस्कार देने योग्य।

विवाह और विवाहित जीवन—पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय। विवाह तथा विवाहित जीवन से सम्बन्धित प्रश्नों पर इस ग्रन्थ में बड़ा रोचक विश्लेषण है। यह पुस्तक नई-नवेली दुल्हन से भी सुन्दर और रोमांचक है।

गीतसागर—पं० नन्दलाल वानप्रस्थी। आर्यसमाज के अनेक कवियों व भजनोपदेशकों की प्रतिनिधि रचनाओं का संकलन। भजनों व गीतों में ईश्वर-स्तुति, प्रार्थना-उपासना, अछूतोद्धार, देशभक्ति, समाज-सुधार, स्त्री-शिक्षा, पाखण्ड-खण्डन आदि का समावेश है।

सत्यार्थप्रकाश

[आधुनिक हिन्दी रूपान्तर]

रूपान्तरकार : स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

स्वामी जी ने इस ग्रन्थ के प्रत्येक वाक्य को समझने का प्रयत्न किया है। इस में जो छापे की अशुद्धियां रह गयी थीं, प्रूफ व संशोधकों की असावधानी से कोई शब्द छूट गया था, इस प्रकार की सभी अशुद्धियों को ठीक कर दिया गया है।

आज तक जितने भी संस्करण छपे हैं, उन सभी से सुन्दर, अनेक टिप्पणियों से विभूषित, कठिन शब्दों के अर्थ से युक्त यह संस्करण है। पाठक पढ़कर भाव-विभोर हो उठेंगे।

अपने स्वाध्याय के लिए, अपने मित्रों-सम्बन्धियों को भेंट देने के लिए उपयोगी संस्करण।

साधारण मूल्य : १२५-०० रुपये

डीलक्स मूल्य : २००.०० रुपये

महर्षि दयानन्दचरित

लेखक : देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय

श्री देवेन्द्रनाथ जी द्वारा लिखित यह अनूठा जीवन-चरित है। उन्होंने १५ वर्ष तक सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करके जहां-जहां ऋषि गये थे, वहां-वहां जाकर, जिन-जिन लोगों से मुनि मिले थे उन-उनसे मिलकर, उनके जीवन की सामग्री एवं घटनाओं का संकलन किया था। इस प्रकार यह प्रामाणिक और खोज-पूर्ण संस्करण है।

मूल्य : २५०.०० रु०

प्रकाशक-मुद्रक अजयकुमार ने सम्पादित कर अजय प्रिंटर्स, दिल्ली-३२ में मुद्रित करा वेदप्रकाश कार्यालय, ४४०८ नयी सड़क, दिल्ली से प्रसारित किया।